Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

॥श्रीः॥

ताराचरणभट्टाचार्यविरचितम्

भारतवसुन्धरासान्त्वनम्

(गीतिकाव्यम्)

सान्वयगङ्गाख्यहिन्दीव्याख्यासंवलितम्

सम्पादकः

प्रो. विश्वनाथभट्टाचार्यः

पूर्वसंस्कृतविभागाध्यक्षः
संस्कृतविभागः, कलासंकायः
काशीहिन्दूविश्वविद्यालयः
वाराणसी।

अनुवादकः व्याख्याकारश्च

प्रो. शिवरामशर्मा

साहित्यविभागः, संस्कृतविद्याधर्मविज्ञानसंकायः
काशीहिन्दूविश्वविद्यालयः, वाराणसी।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

काव्यपरिचयः

वाराणस्या महनीयकविपरम्परायामाचार्यताराचरण-भट्टाचार्यो विंशशताब्द्याः मूर्धन्यः कविरासीत्। साहित्य-शास्त्रविशेषज्ञेनाध्यापकेनानेन विदुषा विविधसामजिक-राजनैतिककृत्येष्वपि रुचिमताभावि। स्वातन्त्र्यसमरे त्वस्य राष्ट्रभक्तोत्तमस्य सहभागिता विशेषतो लेखन्या बभूव। अनेन भारतीयसांस्कृतिकगौरवविबोधकाः नैराश्यकलुषितजनमानसशोधकाः स्वातन्त्र्याग्रहोद्-बोधका नैके लेखास्तात्कालिकपत्रिकास्वलिख्यन्त। तदानीं 'वन्दे मातरम्' इत्यादिगीतिकाव्यानामनुकूलप्रभवं स्वातन्त्र्याग्रहग्रहिलेषु विलोक्यानेनापि भारतवसुमती-कीर्तिकीर्तनसंकल्पो व्यधायि व्यरचि चेदं भारतवसुन्धरा-सान्त्वनं नाम सप्तषष्ट्यधिशतपद्यात्मकं गीतिकाव्यम्।

गेयतानुकूलमात्राछन्दोबद्धेऽस्मिन् काव्ये कविना पारतन्त्र्यसन्तापनिर्भरा भारतवसुन्धरा तद्गौरवमयातीत-वर्णनेन विगतसन्तापा व्यधायि। भारतवसुन्धरासौन्दर्यो-न्मीलनपुरःसरमत्र कविना एतद्देशावतरितमहितचरित-महापुरुषपौरुषाणां, ग्रथितज्ञानगरिमगुरुग्रन्थानां संख्या-वतां, धर्मधुरन्धरधीरवीरराजर्षीणां, निर्दयबर्बरयवनाक्र-मणप्रतीकारपरौजस्विशूराणां, चरितानि चित्रितानि, तेन च विस्मृतस्वेतिहासा निराशा भारतवसुन्धरा सान्त्विता। संस्कृतकाव्यप्रणयनस्य प्राचीनां नवीनाञ्च रीतिमनुसरन्नत्र कविः क्वचिदोजस्वितामन्यत्र मधुरताम-परत्र च प्रसादतामबध्नात्। सर्वत्रान्त्यानुप्रासविलसितेऽ-स्मिन् काव्ये यमकादयः शब्दालङ्कारा उपमारूपकोत्प्रेक्षा-दयश्चार्थालङ्काराः श्रियं पुष्णन्ति। अङ्गितया प्रतीयमानं भावध्वनिं वीररौद्रभयानकादयो रसध्वनयः समर्थयन्ति। इत्थं संकलसत्काव्यलक्षणोपेतमिदं काव्यं सहृदयादरणी-यतामासादयिष्यतीति मे दृढः प्रत्ययः।

शिवरामशर्मा

ISBN 938199996-1
9 789381 999967

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

10.3

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

॥ श्रीः ॥

श्रीताराचरणशर्मभट्टाचार्यविरचितम्

भारतवसुन्धरासान्त्वनम्

गीतिकाव्यम्

सान्वयगङ्गाख्यहिन्दीव्याख्यासंवलितम्

सम्पादकः

प्रो. विश्वनाथभट्टाचार्यः

पूर्वसंस्कृतविभागाध्यक्षः

कलासङ्कायः, का.हि.वि.वि., वाराणसी।

**

सम्पादकः व्याख्याकारश्च

प्रो. शिवराम शर्मा

साहित्यविभागः

संस्कृतविद्याधर्मविज्ञानसङ्कायः, का.हि.वि.वि., वाराणसी।

प्रकाशक

शारदा संस्कृत संस्थान

वाराणसी-२२१००२

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

प्रकाशक -
शारदा संस्कृत संस्थान
सी.२७/५९ जगतगंज, वाराणसी-२२१००२
दूरभाष - (०५४२) २२०४१६८
E-mail:sharadabhawan@yahoo.co.in
website-www.sharadasansthan.in

ISBN: 978-93-81999-96-7

सन् २०१७

© प्रो.विश्वनाथ भट्टाचार्य

आवाससंकेत-
२९, उपेन्द्र नगर
दुर्गाकुण्ड, वाराणसी-२२१००५
दूरभाषा (०५४२) २३१०४१६/९८३८३२४०१९

मुद्रक -
गौरी शंकर प्रेस,
वाराणसी।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

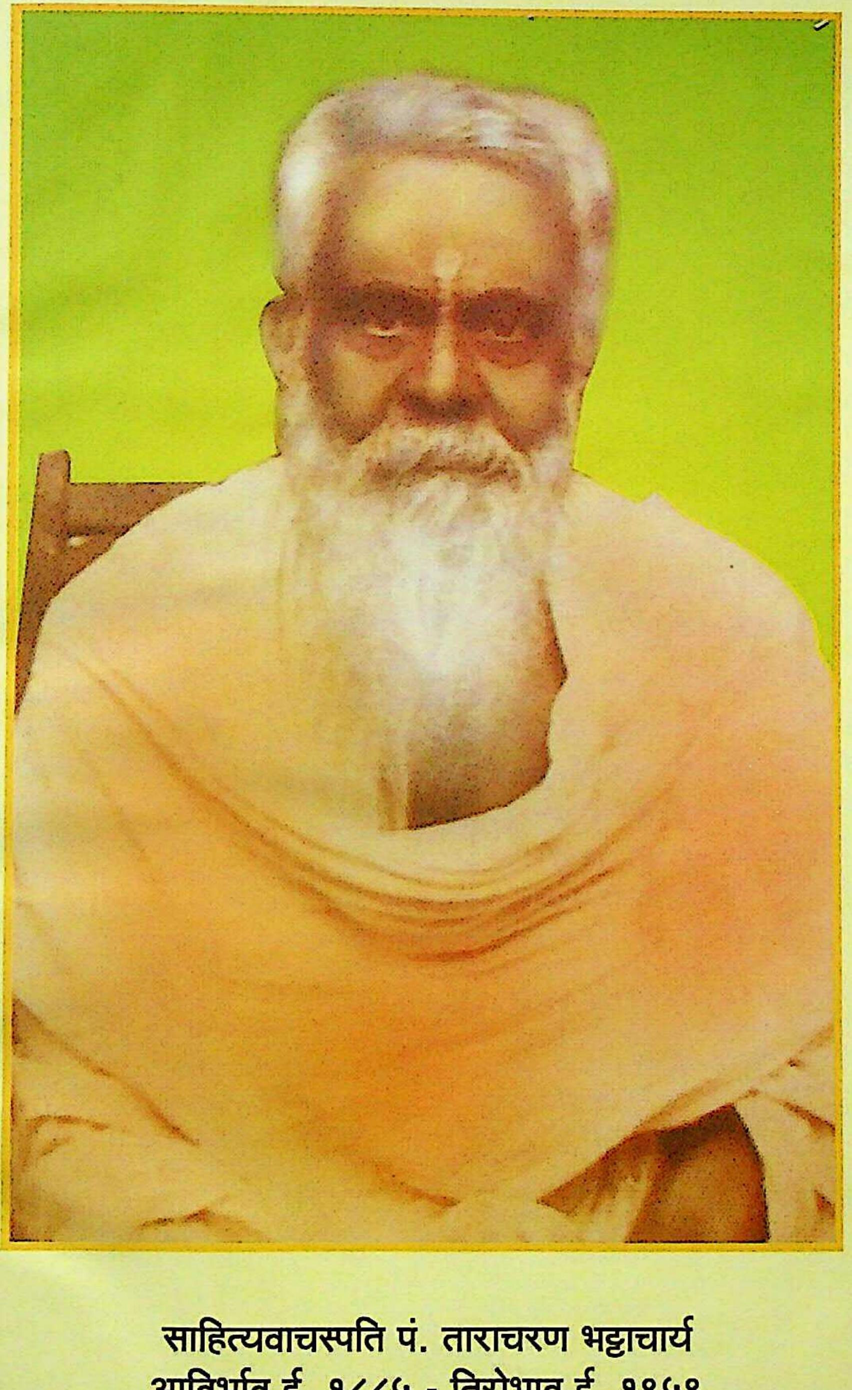

साहित्यवाचस्पति पं. ताराचरण भट्टाचार्य
आविर्भाव ई. १८८५ - तिरोभाव ई. १९५९

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

शुभाशंसा

काशिकेयकविमण्डलमण्डनायमानैराजीवनमनुशीलितसंस्कृतवाङ्मयैः भगवदुपासनालीनचित्तैः ज्ञानैकवित्तैः विगतविवादैः मम तातपादैः पं.श्रीताराचरण भट्टाचार्यैरध्ययनाध्यापन एवाखिलमायुष्यं व्यतियापितम्। कवित्वकौशलोल्ल-सितैरपि तैर्न व्यरचि किमपि महाकाव्यादिकं स्थूलग्रन्थजातम्। अद्वितीयमिदं तद्धस्तलिखितं **'भारतवसुन्धरासान्त्वनम्'** नाम गीतिकाव्य-मेवास्माभिरासादितं गृहे संरक्षितम्। लघुकलेवरस्यापि तेषां कीर्तिलतायमानस्यास्य काव्यस्य समुचितं प्रकाशनमस्माकमेव कर्त्तव्यमासीत्, किन्त्वस्माभिर्नालम्भि तावान् समयो यावतेदं हिन्द्यनुवादादिविभूषितं सत् प्राकाश्यमानीयेत। पञ्चासीतेरप्यधिकमपनीते वयसीदानीं जराजर्जरितशरीरेण विलीयमानेन्द्रियसामर्थ्येन मयास्य प्रकाशनस्यान्तिमः प्रयासो विहितः, निवेदिताश्च ममान्तेवासिनो हिन्दूविश्वविद्यालये गरिष्ठपदप्रतिष्ठिताः प्रो.सदाशिवकुमारद्विवेदिनोऽस्य समुचितप्रकाशनाय। तैरप्यत्यधिकगुरुकार्यजात-व्यस्तैरेतत्कार्यसमर्थस्य पं.शिवरामशर्मणो नाम प्रस्तावितम्, यथाशीघ्रं प्रकाशना-ग्रहग्रहिलेन मया च तदनुमोदितम्। स्वीकृतहिन्द्यनुवादादिसहितैतत्काव्यप्रकाशनभारैः शर्ममहोदयैर्नातिविलम्बेन सुकृत्यमिदमुपपादितं, मम चेतश्च प्रसादितम्।

अद्यास्य प्रकाशनावसरे मोमुद्यते मे स्वान्तं, नितान्तगुरुभारापगमाद् भारवाहिन इव। महदिदं पितृपरितोषकार्यं यदि सम्पन्नतां नागमिष्यत्तदा मम स्वान्तमपि नागमिष्यन्निर्वृतिम्। अस्तु, सम्प्रति वीतचिन्तोऽहं श्रीशर्ममहोदयानां साशीर्वादं मङ्गलं कामये। कामये च भारतवसुन्धरागुणगौरव वर्णनपरस्य राष्ट्रप्रेमपरिपूर्णस्य काव्यस्यास्य सहृदयजनमनःप्रीतिपोषिकां सफलताम्।

विश्वनाथभट्टाचार्यः

अनन्त चतुर्दशी - २०७४ (संवत्)
सितम्बर - २०१७

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कवि एवं काव्यपरिचय

कवि–पं. श्री ताराचरण भट्टाचार्य जी

पारिवारिक पृष्ठभूमि–भगवान् साम्बसदाशिव द्वारा नित्य अधिष्ठित काशी नगरी अतिप्राचीन काल से सकल विद्याओं की उपासनास्थली रही है। भारतवर्ष के ही नहीं अपितु अन्यदेशों के विद्वान भी यहाँ आकर विद्याध्ययन एवं शास्त्रपरिष्कार करते रहे हैं। ऐतिहासिक तथ्यों से ज्ञात होता है कि काशी में अध्ययन के लिये आने वाले विद्वान् प्रायः यहीं बस जाते थे। उन्नीसवीं शताब्दी में काशी की विद्वन्मण्डली को अलङ्कृत करने वाले पं.काशी प्रसाद भट्टाचार्य के पूर्वज ऐसे ही विद्वानों में अन्यतम थे। इनके विषय में अधिक जानकारी उपलब्ध नहीं है, बस इतना ज्ञात है कि उनके पूर्वज पूर्वबङ्ग प्रदेश (सम्प्रति बंगलादेश) से काशी आये थे। पं.काशी प्रसाद जी के पाण्डित्य के विषय में भी अधिक लिखित विवरण उपलब्ध नहीं है। कर्णपरम्परा से ये ज्ञात होता है कि ये वेदशास्त्रश्रद्धासम्पन्न, परमधार्मिक, भगवान् विश्वनाथ के उपासक एवं विशेषतः माता महाकाली के परम भक्त थे। इनकी पत्नी का नाम शारदासुन्दरी देवी था। इनको तीन पुत्र एवं दो पुत्रियाँ थीं। पुत्रों में महामहोपाध्याय पं. वामाचरण भट्टाचार्य एवं प्रस्तुत गीतिकाव्य 'भारत-वसुन्धरासान्त्वनम्' के प्रणेता साहित्यवाचस्पति पं.ताराचरण भट्टाचार्य विगत बीसवीं शताब्दी में काशी की विद्वन्मण्डली में अग्रगण्य विद्वानों के रूप में प्रतिष्ठित रहे हैं।

काशी के विख्यात नैयायिक पं.कैलाशचन्द्र शिरोमणि के प्रधान शिष्य पं.वामनचरण भट्टाचार्य जी का न्यायशास्त्रीय वैदुष्य काशी में प्रथित है। ये अद्वितीय शास्त्रार्थकर्त्ता तो थे ही अप्रितम अध्यापक भी थे। आज काशी में न्यायशास्त्र इनकी शिष्य परम्परा द्वारा ही संरक्षित हो रहा है। पण्डितराज राजेश्वर शास्त्री द्रविड इनके ही शिष्य थे।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कवि परिचय–पं. ताराचरण भट्टाचार्य पं.वामनाचरण जी के अनुज थे। इनका जन्म काशी में सन् १८८५ में हुआ था। इन्होंने प्रारम्भिक शिक्षा काशी में ही तत्कालीन विद्वान् पं. गदाधर शिरोमणि से प्राप्त की थी। पं.सुरेन्द्र मोहन तर्कतीर्थ एवं अपने अग्रज पं.वामाचरण जी से न्यायशास्त्र का अध्ययन करके इन्होंने साहित्यशास्त्र का चूडान्तज्ञान तत्कालीन मूर्धन्य विद्वान् महामहोपाध्याय पं. गङ्गाधरशास्त्री से प्राप्त किया था। ये मुख्यत: साहित्यशास्त्र के ही विशेषज्ञ थे। साथ ही आधुनिक विषयों एवं अंग्रेजी भाषा के भी ज्ञाता थे। जिनका अध्ययन इन्होंने पाश्चात्य विद्वान् डॉ. वेनिस एवं नार्मन से किया था। इस प्रकार ताराचरण जी प्राच्य एवं पाश्चात्य विद्याओं के वेत्ता होने के साथ साहित्यविद्या के मूर्धन्य विद्वान् मनीषी थे।

अध्ययन एवं अध्यापन–पं. भट्टाचार्य जी ने 'गवर्नमेण्ट-संस्कृत-कालेज, बनारस' से 'साहित्योपाध्याय' तथा बंगाल से 'काव्यतीर्थ' की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। साहित्यशास्त्र में सर्वोच्च उपाधि प्राप्त करने के अनन्तर ये सर्वप्रथम बनारस के बंगाली–टोला–इण्टर–कालेज में अध्यापक नियुक्त हुए। यहाँ माध्यमिक स्तर के छात्रों को सामान्य संस्कृत पढ़ाना इनको अनुकूल नहीं लगा, अत: उक्त कालेज को त्याग कर, इन्होंने काशी के टीकमणि–कालेज में साहित्यशास्त्र पढ़ाना आरम्भ किया। इसके कुछ वर्षों बाद इनकी नियुक्ति काशी के प्रतिष्ठित गोयनका–संस्कृत–कालेज में हो गयी, जहाँ इन्होंने सेवानिवृत्ति पर्यन्त साहित्यशास्त्र का अध्यापन किया।

परिवार–पं. ताराचरण भट्टाचार्य जी ने दो विवाह किये थे। इनकी प्रथम पत्नी से दो पुत्र तथा एक कन्या उत्पन्न हुयी। प्रथम पुत्र का नाम हेमेन्द्र भट्टाचार्य तथा द्वितीय पुत्र का नाम विभूतिभूषण भट्टाचार्य था। श्री विभूतिभूषण जी न्यायशास्त्र के गभीर अध्येता थे। उन्होंने संस्कृतविश्वविद्यालय, वाराणसी के सरस्वती–भवन–पुस्तकालय के पुस्तकालयाध्यक्ष के रूप में कार्य कर संस्कृत भारती की सेवा की है।

भट्टाचार्य जी की दूसरी पत्नी से एक पुत्र तथा दो पुत्रियाँ हुयीं। पुत्र आचार्य पं.श्री विश्वनाथ भट्टाचार्य जी से वर्तमान विद्वज्जगत् पूर्णत: परिचित है। आपने काशी-हिन्दू-विश्वविद्यालय के कलासङ्कायान्तर्गत संस्कृत विभाग में दीर्घकाल तक आचार्य एवं विभागाध्यक्ष पद पर प्रतिष्ठित रहते हुए, अपने

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सरस–सुबोध्य अध्यापन, व्याख्यानकौशल एवं महत्त्वपूर्ण ग्रन्थादि के लेखन द्वारा महती कीर्ति अर्जित की है। सन् १९९२ में उक्त पद से सेवानिवृत्त होकर वर्तमान में अध्ययन–अध्यापन, शास्त्रचिन्तन एवं देवाराधन द्वारा तुरीयावस्था को सफल करते हुए काशी में निवास कर रहे हैं।

स्वभाव एवं जीवनदर्शन–पं. ताराचरण जी स्वभाव से अत्यन्त सरल एवं विनयशील थे। अध्ययनशील एवं प्रकृत्या मधुरभाषी होने के कारण इनको छात्रावस्था में सदा गुरुओं का स्नेह एवं आशीर्वाद प्राप्त होता था। श्रौतस्मार्त–कर्मों में पूर्ण श्रद्धावान्, परम धार्मिक श्री भट्टाचार्य जी श्रीदुर्गादेवी के अनन्योपासक थे। इनके घर में अष्टधातु की दुर्गाप्रतिमा थी, जिसकी पूजा नित्य पूर्णशास्त्रीय विधि से सम्पादित होती थी। पूजा का अधिकार यज्ञोपवीत हो जाने के अनन्तर ही मिलता था। ये ब्राह्म–मुहूर्त्त में स्वयं पहले जग कर घर के सभी सदस्यों को जगाते थे। नित्य–कृत्य, सन्ध्यावन्दन एवं देवी पूजन सम्पन्न कर विद्यालय चले जाते थे। मध्याह्न में घर आकर भोजनोपरान्त अल्प विश्राम कर पुनः घर पर भी छात्रों को पढ़ाते थे। इनका अपनी सन्तति के प्रति विशेष मोह नहीं था। सबके आचारवान् एवं ज्ञानवान् होने की कामना तो रखते थे, किन्तु उन पर विशेष अनुशासन नहीं रखते थे। कर्म एवं भाग्य पर पूर्ण विश्वासी थे, अतः दुराग्रही नहीं थे। बालक-बालिकाओं को भारतीय ज्ञान के प्रति प्रेरित करते थे तथा स्वयं ही इन्हें घर पर कोष, काव्य, न्याय के मुग्धबोध व्याकरण पढ़ाते थे। वे इन्हें वैदेशिक अंग्रेजी भाषादि के ज्ञान से दूर ही रखना चाहते थे।

दया एवं परोपकार के संस्कार इन्हें कुलपरम्परा से प्राप्त थे। निर्धनों की सहायता कर, निर्धन कन्याओं का विवाह करा कर एवं निर्धन छात्रों को अध्ययन सामग्री प्रदान कर इन्हें परम सन्तोष होता था। ये सभी कार्य ये स्वेच्छा से, बिना किसी को बताये, घर वालों को भी विना बताये ही करते थे।

पं. ताराचरण भट्टाचार्य एक पक्षीय संस्कृत विद्वान् मात्र नहीं थे। अध्यपक होने के साथ इनके जीवन की सबसे बड़ी विशेषता थी कि ये उच्चकोटि के नाट्यप्रयोक्ता भी थे। ये अभिनय, संवाद–लेखन एवं नाटकोचित गीतलेखन में परम दक्ष थे। इन्होंने 'शाकुन्तलम्' में दुष्यन्त की, 'वेणीसंहार'

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

में दुर्योधन एवं भीम की तथा 'चण्डकौशिक' में राजा हरिश्चन्द्र की भूमिका का सफलता पूर्वक निर्वहण कर मुक्तकण्ठ से दर्शकों की प्रशंसा प्राप्त की थी। श्री भट्टाचार्य जी नाट्यविद्या के इतने अनुरागी थे कि इन्होंने संस्कृत नाटकों के प्रयोग के लिये 'भारती-समिति' नामक एक संस्था की स्थापना की थी, जिसका सञ्चालन ये स्वयं ही करते थे। ये संस्कृत नाटकों के लिये गीत भी लिखा करते थे, जिनका प्रयोग यथास्थान ध्रुवागानादि के रूप में किया जाता था। संस्कृत के साथ 'बाँग्ला नाटकों' में भी ये पूर्णरूप से सक्रिय भाग लेते थे।

वैदिकधर्म, भारतीय संस्कृति एवं राष्ट्रभक्ति से ओत–प्रोत पं. ताराचरण जी उक्त कार्यों के अतिरिक्त साहित्यिक, सामाजिक एवं राजनैतिककार्यों में भी रुचि रखते थे। तत्कालीन प्रसिद्ध पत्रिका 'मित्रगोष्ठी' की व्यवस्था एवं सञ्चालन में इनका पूर्ण सहयोग रहता था। इस प्रतिष्ठित पत्रिका में म.म.पं. रामावतार शर्मा आदि प्रसिद्ध विद्वानों के लेख भी प्रकाशित होते थे। काशी नगरी के सामाजिक कार्यों में सहयोग देने के साथ भट्टाचार्यजी राजनैतिक अनुष्ठानों में भी भाग लेते थे। लार्ड कर्जन द्वारा 'बंगभंग' के समय इन्होंने राष्ट्रिय–आन्दोलन में सक्रिय भाग लिया था। 'सेवासमिति' नामक संस्था की स्थापना कर विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार तथा स्वदेशी वस्त्रों के प्रचार एवं विक्रय को प्रोत्साहित किया था।

इस प्रकार विविध संस्कृत शास्त्रज्ञ, कलामर्मज्ञ, काव्यशास्त्री, कवि, अभिनेता एवं राष्ट्रभक्त पं. श्रीताराचरण भट्टाचार्य का व्यक्तित्व एक परिपूर्ण, भारतीय कर्मयोगी, आर्यपुरुष का था। इनके सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक कार्य इन्हें तत्कालीन काशिकेयपण्डितों की श्रेणी से किञ्चित उच्च पद पर प्रतिठापित करते हैं।

ग्रन्थरचना–पं. ताराचरण जी द्वारा लिखित ग्रन्थों की संख्या अधिक नहीं है, इसका कारण है कि ये आजीवन अध्ययन-अध्यापन में ही व्यस्त रहे। अपने भरे-पूरे परिवार के प्रति दायित्वों का पूर्ण निर्वहण करते हुए उन्होंने सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक एवं साहित्यिक कार्यों में भी सक्रिय भूमिका का निरन्तर निर्वहण किया, अतः इन्हें ग्रन्थ लेखन के लिये अपेक्षित अवधानता एवं समय उपलब्ध नहीं हो सका। वस्तुतः केवल छपने

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

के लिये ग्रन्थ लिखने की प्रवृत्ति इनमें नाम-मात्र भी नहीं थी। इनके पुत्र आचार्य विश्वनाथ भट्टाचार्य के कथनानुसार वे पुराने ज्ञान के पिष्टपेषण की अपेक्षा कुछ नवीन लिखने में विश्वास रखते थे, चाहे वह अल्प ही क्यों न हो। भट्टाचार्य जी द्वारा लिखित तीन कृतियों की सूचना प्राप्त है। वे निम्नलिखित है–

१. 'दशकुमारचरितम्' की संस्कृत टीका, जिसका प्रकाशन चौखम्बा संस्कृत विद्या भवन काशी द्वारा किया गया था। वर्तमान में बाजार में उपलब्ध नहीं है।

२. संस्कृत नाटकों में यथास्थल प्रयोग के लिये लिखे गये संस्कृत गीत। ये गीत संगृहीत होकर प्रकाशित नहीं हो सके हैं।

३. भारतगीतिका–(भारतवसुन्धरासान्त्वनम्)

प्रस्तुत गीतिकाव्य "भारतवसुन्धरासान्त्वम्" उक्त 'भारतगीतिका' का ही नामान्तर है। वस्तुतः कहा जाय तो यही एकमात्र ग्रन्थ है, जो भट्टाचार्य जी के यशःकायरूप में प्रतिष्ठित है। इस लिखने की प्रेरणा इन्हें बंगभंग के विरुद्ध हुए राष्ट्रिय-आन्दोलन के समय मिली थी। इस आन्दोलन के समय भारत का प्रत्येक जागृत नागरिक अपनी भूमिका का निर्वहण कर रहा था। साहित्यकार अपने विविध लेखों एवं राष्ट्रभक्तिमय गीतों के द्वारा राष्ट्रप्रेम जागृत कर रहे थे। इस कार्य में बंगाल के लेखक–कवि अग्रणी थे। बंकिमचन्द्र चटर्जी द्वारा संस्कृतनिष्ठ बांग्लाभाषा में रचित प्रसिद्ध गीत 'वन्दे मातरम्' की गूँज सम्पूर्ण भारत में व्याप्त हो रही थी। हिन्दी में मैथिलीशरण गुप्त द्वारा लिखित 'भारतभारती' नामक ओजस्वी काव्य भारतीयों के हृदय में राष्ट्रभक्ति की प्रेरणा दे रहा था। पं.ताराचरण जी ने चतुर्दिक् सभी भाषाओं में राष्ट्रभक्ति प्रेरक गीतों की महत्ता से उत्साहित होकर संस्कृत–भाषा में भारतमाता के गौरव पूर्ण राजनैतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास को पद्यबद्ध करने का संकल्प किया। उनका यह संकल्प तब और दृढ़ हुआ जब उनके मित्रों ने उन्हें प्रोत्साहित किया। फलतः उन्होंने १६७ पद्यों की रचना कर उस संग्रह को 'भारतगीतिका' नाम प्रदान किया। उनके द्वारा लिखी गयी प्राप्त प्रति में 'भारतगीतिका' शीर्षक अंकित किया गया है, किन्तु उसे काट कर ऊपर 'भारतवसुन्धरासान्त्वना' भी उन्हीं की हस्तलिपि में लिखित है। बाद में विद्वानों से परामर्श कर इसका नाम

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

"भारतवसुन्धरासान्त्वनम्" सुनिश्चित हुआ।

यह गीतिकाव्य उनके जीवनकाल में प्रकाशित नहीं हो सका। उनके पुत्र तथा हम सब के परम श्रद्धेय गुरु आचार्य विश्वनाथ भट्टाचार्य जी भी इसके प्रकाशन का संकल्प लिये अनुकूल समय की प्रतीक्षा करते रहे, किन्तु उनके सम्पूर्ण अध्यापन काल में व्यस्तता के कारण वह अनुकूल समय नहीं आ सका। इसका एक अन्य कारण भी था– गुरु जी (विश्वनाथ भट्टाचार्य जी) इसे हिन्दी अनुवाद के साथ प्रकाशित कराना चाहते थे। अतः सेवा निवृत्ति के बाद इस कार्य को करने का निश्चय करते रहे। सेवा निवृत्ति के बाद दैवदुर्विपाक से उनके नेत्रों की ज्योति क्षीण होने लगी जो कि उत्तरोत्तर बढ़ती ही गयी, फलतः उन्होंने स्वयम् हिन्दी–अनुवाद करने का निश्चय त्याग दिया।

विगत मई (२०१७) मास में गुरुजी के शिष्य एवं काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग के आचार्य प्रो. सदाशिव कुमार द्विवेदी जी ने मेरे समक्ष इस काव्य को हिन्दी भाषा में अनूदित करने का प्रस्ताव रखा एवं संगणक–टंकित प्रति भी भेज दी। मैं ने उनसे कहा कि– इसका अध्ययन करने के बाद अपनी क्षमता का आकलन कर मैं उचित निर्णय लूँगा। अध्ययन करने के अनन्तर ज्ञात हुआ कि– यह गीतिकाव्य अत्यन्त श्लाघ्य एवं वर्तमान परिप्रेक्ष्य में राष्ट्रभक्ति जागृत करने में परमोपयोगी है। यदि हिन्दी अनुवाद के साथ प्रकाशित किया जाय तो न केवल हमारी ज्ञाननिधि संरक्षित होगी, अपितु वर्तमान संस्कृत कवियों को इस विधा में काव्यप्रणयन की प्रेरणा भी मिलेगी, अतः मैं ने इसकी हिन्दी व्याख्या करने की स्वीकृति दे दी। भगवत्कृपा एवं गुरुकृपा से यह कार्य पूर्णता की ओर अग्रसर हैं।

काव्य–भारतवसुन्धरासान्त्वनम्

वर्ण्यविषय–गायनानुकूल अन्त्यानुप्रासविलसित मात्रा–छन्द में निबद्ध इस काव्य में भारतवसुन्धरा के भौतिक एवं आध्यात्मिक सौन्दर्य वर्णन के साथ प्रायः समस्त धार्मिक–प्रतापी राजाओं के इतिहास प्रसिद्ध चरित्र निबद्ध हैं। साथ ही महर्षि वाल्मीकि से लेकर मध्यकाल तक के प्रसिद्ध कवि, सूत्रकार, भाष्यकार, दार्शनिकग्रन्थकार आदि की चर्चा भी ललित पद्यों में की गयी है। यथास्थल वैदेशिक यवन–आक्रान्ताओं के उग्रकृत्यों के यथार्थ चित्रण भी किये गये हैं। विशेषतः बंगदेश पर आक्रमण करने वाले यवन

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

बख़्तियार खिलजी के क्रौर्य का वर्णन तथा उसकी दुर्दशापूर्ण पराजय का वर्णन अतीव हृदयग्राही है।

इस काव्य में कवि का मानना है कि-दीर्घकालीन परतन्त्रता काल में निर्दयी स्वेच्छाचारी वैदेशिक शासकों के अत्याचारों से पीड़ित भारतवासियों की दुर्दशा देख कर माता भारतवसुन्धरा व्यथित है। उसकी इस व्यथा को दूर करने के लिये कवि ने उसके गौरवमय इतिहास का स्मरण करा कर सान्त्वना प्रदान की है। पद्यों में भारतवसुन्धरा को माता के रूप में संवोधित कर तत्सम्बन्धी विभिन्न गरिमामय प्रसङ्गों का ओजस्वी वर्णन किया गया है। सम्बोधन के लिये "भारतवसुन्धरे!" मातः! सति!" आदि पदों के साथ अन्य पृथ्वीवाचक शब्दों के भी यथास्थान अन्वर्थ प्रयोग कवि के कवित्वपाटव को निदर्शित करते हैं।

काव्यतत्त्व—काव्य की भाषा प्रधानतः जटिल, ओजोमयी तथा समास बहुला गौडी रीतिमयी है। यथास्थल विषयानुसार वैदर्भीमय सरल पद्य भी निबद्ध हैं। सम्पूर्णकाव्य में रूपक अलङ्कार का प्रचुरतया प्रयोग किया गया है, यत्र तत्र उपमादि अलङ्कार भी प्रयुक्त हैं। अन्त्यानुप्रास के साथ सर्वत्र अन्य अनुप्रासों की छटा भी विकीर्ण है। दो-तीन स्थलों यमक-अलङ्कार का सुन्दर निबन्धन भी किया गया है।

काव्य का अङ्गी रस कविनिष्ठभारतवसुन्धराविषयकभावध्वनि है। चिन्तित-व्यथित माता को सान्त्वना देने वाले पुत्र के हृदय में मातृविषयकरविभाव स्वतः सिद्ध है। इसके विना सान्त्वना देने की प्रवृत्ति सम्भव नहीं है। वसुन्धरा आलम्बन विभाव तथा भारतभूमि की सौन्दर्य-समृद्धि आदि के साथ उसके पुत्रों राजाओं-विद्वानों के पुण्य-कृत्य उद्दीपन विभाव है। कविकृत वर्णन अनुभाव तथा हर्ष-रोमाञ्च-विबोधादि सञ्चारीभाव हैं। अङ्गतया वीर, रौद्र, बीभत्स, भयानक, अद्भुत आदि रसों का अभिव्यञ्जन कवि ने यथास्थान किया है।

छन्दोयोजना—सम्पूर्ण काव्य एक ही मात्रा छन्द में निबद्ध है। इस छन्द का नाम निर्देश छन्दोग्रन्थों में प्राप्त नहीं होता। सम्भवतः गेयतानुकूल इस छन्द का प्रयोग बंगदेश में प्रचलित रहा होगा। ग्रन्थ लेखन काल में हिन्दीभाषा के कवियों की इस छन्द के समान छन्दों में निबद्ध रचनायें प्राप्त

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

होती हैं। हिन्दी के महाकवि जयशङ्कर प्रसाद की प्रसिद्ध कविता–

हिमाद्रितुङ्गश्रृङ्ग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती।
स्वयं–प्रभा समुज्वला स्तन्त्रता पुकारती।।

इस छन्द के समान (किञ्चित् परिवर्तित) छन्द में निबद्ध है।

प्रस्तुत छन्द समकोटि का मात्रा छन्द है, अतः प्रत्येक पाद समान लक्षण से लक्षित है। प्रत्येक पाद में प्रायः तेईस मात्रायें हैं, यत्र-तत्र बाईस मात्राओं के पाद भी निबद्ध हैं। पाद में बारह एवं दश या ग्यारह पर यति है। पाद के पूर्वार्द्ध में बारह मात्रायें सर्वत्र हैं, उत्तरार्द्ध में दश या ग्यारह का विकल्प दृष्टिगोचर होता है। गेय पद्यों में इस तरह की मात्रा-विसङ्गति गान में कर्षण या सङ्कोच कर तिरोहित कर दी जाती है, अतः इसे दोष नहीं कहा जा सकता। गेयत के लिये अन्त्यानुप्रास का प्रयोग अनिवार्य है। इसे पूर्वार्द्ध एवं उत्तरार्द्ध में परिवर्तित कर सकते हैं। यदि चारों पादों में समान अनुप्रास सम्भव हो तो पद्य की श्रव्यता-रमणीयता और अधिक बढ़ जाती है। किन्तु इस काव्य में ऐसा एक भी पद्य निबद्ध नहीं है। छन्दोयोजना की दृष्टि से उदाहरण द्रष्टव्य हैं-

१२ मात्रायें ११ मात्रायें
। । ऽ ।। ऽ । ऽ । ऽ । । ।। ऽ । ऽ
जय भारतभूमि भासि, विश्वभुवनवन्दिता।
१२ मात्रायें १० मात्रायें
ऽ ऽ । । । । ।। । । । । । । । । ऽ ऽ
व्याप्नोति च परभुवमपि, भगवति तव पण्यम्।

प्रस्तुत गङ्गा व्याख्या– संस्कृत–भारती एवं गङ्गा–नदी– ये दोनों ही उदात्त गरिमामयी भारतीय संस्कृति के प्रतीक एवं संवाहक है। आज दोनों की दशा को चिन्तनीय मान कर इनके संरक्षण के लिये राष्ट्र जागृत हो रहा है। प्रस्तुत काव्य भारतभूमि के गौरव का व्याख्यपक है, अतः इसकी व्याख्या का नाम 'गङ्गा' रखा गया है। प्रथमतया इस काव्य का हिन्दी अनुवाद ही संकल्पित था, किन्तु अनुवाद करते समय यह अनुभव हुआ कि– विना वाक्यार्थान्वय को लिखे केवल हिन्दी–अनुवाद पाठकों को बोधगम्य नहीं हो पायेगा। अन्वय योजित करने का एक कारण और था– अनेक स्थलों पर दो

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

या तीन पद्य 'युग्मक–सन्दानितक' के रूप में एकान्वयि हैं। ऐसे पद्यों का अर्थबोध अन्वययोजना के विना अतिकठिन है, अतः अन्वय का समायोजन किया गया। व्याख्या में 'काव्यत्वविमर्श' शीर्षक भी अनुबन्धित है। इसमें पद्यस्थ काव्यतत्त्वों के विमर्श की योजना थी, किन्तु अधिक विस्तार के भय एवं समयाभाव के कारण यहाँ विस्तृत विमर्श नहीं किया गया है, केवल अलङ्कार निर्देश, पाठपरिवर्तन का औचित्य एवं वर्णित विषयवस्तु से सम्बन्धित संक्षिप्त सूचनायें दी गयीं है। इस काव्य का कलेवर लघु है, किन्तु विषयगाम्भीर्य को पूर्णतः विवेचित करने के लिये इस की अनेक दृष्टियों से शोध की सम्भावनायें हैं, जिन्हें भविष्य के अध्येता पूर्ण करेंगे।

ऐसा तो सभी विद्वान् मानते हैं कि-किसी भाषा विशेष में काव्य के कविविवक्षितार्थ को भाषान्तर द्वारा पूर्णतः प्रतिपादित नहीं किया जा सकता। यह अनुभव संस्कृत भाषा में रचित काव्यों पर अधिक प्रामाणिक सिद्ध होता है, क्योंकि संस्कृत के शब्द सामान्य अर्थ के अतिरि्क्त किसी विशेष अर्थ को भी प्रतिपादित करते हैं, भाषान्तर में तदर्थप्रतिपादक शब्दों का अभाव होता है, अतः सामान्य शब्दों का ही आश्रय लेना पड़ता है। संस्कृत काव्यानुवाद करने में अन्य अनेक समस्यायें भी उपस्थित होती हैं, जिनसे अनुवादकर्ता विद्वान् परिचित होंगे। इन सब समस्याओं के होते हुए भी प्रस्तुत अनुवाद को यथासम्भव मूलानुसारी एवं रोचक बनाने का प्रयास किया गया है। प्रस्तुत कार्य में मेरे परिश्रम एवं सफलता का आकलन सहृदय विद्वान ही करेंगे।

काव्य के कतिपय पद्यों में आपाततः वाक्यार्थ स्पष्टतया प्रतीत नहीं होता, इसका कारण कवि की छन्दःपरवशता है। कुछ शब्दों का अध्याहार करने पर पूर्णवाक्यार्थ स्पष्ट हो जाता है। कुछ स्थलों पर वाक्यार्थान्वय के लिये अथवा समुचित विवक्षितार्थ की प्रतीति के लिये अत्यावश्यक मानकर पदपरिवर्तन भी किया गया है। इस परिवर्तन का अधिकार मुझे गुरुजी (आचार्य विश्वनाथभट्टाचार्य जी) ने दिया था। पद्य के नीचे मूलपाठ का एवं परिवर्तित-पाठ का सङ्केत कर दिया गया है। अलङ्कार युक्त कथनों की यथोचित प्रतीति के लिये हिन्दी के वाक्य संस्कृतवाक्य के अनुरूप ही घटित किये गये हैं, वे इसलिये कि हिन्दी के अध्येता भी अलङ्कार-युक्त कवि की भङ्गीभणिति का आनन्द ले सकें।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पूर्णता के अवसर पर इस पुनीत कृत्य को करने के लिये प्रवृत्त करने वाले, प्रोत्साहित करने वाले, एवं सहयोग करने वाले विद्वज्जनों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करना मेरे लिये सौभाग्य का अवसर है। सर्वप्रथम में वयोवृद्ध गुरुद्वय आचार्य रेवाप्रसाद द्विवेदीजी एवं आचार्य विश्वनाथ भट्टाचार्य जी के चरणों में प्रणाम अर्पित कर अपने सर्वमङ्गल की कामना करता हूँ। गुरुपुत्र, मुझे सदा अग्रजकल्प सम्मान देने वाले, विशेषत: इस कार्य को करने की प्रेरणा एवं प्रोत्साहन देने वाले, का.हि.वि.वि. (कलासङ्काय के) संस्कृत विभाग के वरिष्ठ आचार्य प्रो. सदाशिव कुमार द्विवेदी जी को पूर्णकृतज्ञभाव से धन्यवाद अर्पित करते हुए उनके मङ्गल की कामना करता हूँ। इस मङ्गल अवसर पर साहित्यशास्त्र के पारम्परिक मनीषी, कवि, साहित्यविभाग (स.वि.ध.वि. सङ्काय) के पूर्वविभागाध्यक्ष, मेरे बालसखा एवं सदा सत्परामर्श दाता प्रो.कौशलेन्द्र पाण्डेय जी को धन्यवाद पुरःसर कृतज्ञता अर्पित करता हूँ। शारदा संस्कृत संस्थान के अधिष्ठाता, संस्कृत एवं संस्कृति के संरक्षण के लिये सतत जागरुक, परम सुहृद्, आचार्य पं.विनोद राव पाठक को यथासमय ग्रन्थ के प्रकाशन के लिये ससाधुवाद कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ। सङ्गणक–टङ्कन कार्य सम्पन्न करने वाले श्रीधर्मपाल जी विशेषत: धन्यवाद के पात्र हैं। सहधर्मिणी श्रीमती सन्ध्या शर्मा, पुत्र-पुत्रियों के साथ उन सभी शिष्यों के कल्याण की कामना करता हूँ, जिन्होंने इस कार्य की पूर्णता में सहयोग किया है। अन्ततः काशीपति भगवान् विश्वनाथ के चरणों में प्रणाम अर्पित कर सबके मङ्गल की अभ्यर्थना करता हूँ।

अनन्तचतुर्दशी–२०७४ विदुषामनुचरः

सितम्बर–२०१७ **शिवराम शर्मा**

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

विषयानुक्रमणिका

विषय	श्लोक सं.	पृ.सं
भारतवसुन्धरासौन्दर्यवर्णनम्	१-१५	१
भगवद्रामचन्द्रवर्णनम्	१६-१८	१०
श्रीकृष्णचन्द्रचरित्रवर्णनम्	१९-२४	११
महर्षिबादरायणवैदुष्यवर्णनम्	२५-२६	१५
भगवत्परशुरामशौर्यस्य भीष्मवीरतायाश्चवर्णनम्	२७-२८	१७
अर्जुनपराक्रमवर्णनम्	२९-३२	१८
विविधसूत्रकारमहर्षिवर्णनम्	३३-३४	२१
कालिदासकवित्वकौशलवर्णनम्	३५-३८	२२
समुद्रगुप्तसामर्थ्यवर्णनम्	३९-४०	२५
हर्षवर्धनवीरतावर्णनम्	४१-४६	२६
गौडदेशशासकपालवंशीयराजचरितवर्णनम्	४७-५०	२९
भोजराजौजोवर्णनम्	५१-५२	३२
दानधर्मपरायणमहापुरुषवर्णनम्	५३-५४	३४
भगवद्बुद्धचरितवर्णनम्	५५	३७
चन्द्रगुप्तप्रतापचाणक्यवैदुष्यवर्णनम्	५६-५८	३६
मुरनपतिवर्णनम्	५९-६०	३८
अशोकसत्कृत्यवर्णनम्	६१-६८	३९
विक्रमादित्यकीर्तिवर्णनम्	६९-७६	४३
सेनवंशीयगौडदेशशासकचरितवर्णनम्	७७-८८	४७
बङ्गदेशे यवनाक्रमणवर्णनम्	८९-१०३	५३
पृथ्विराजौजोवर्णनम्	१०४-१०५	६०
शिवराजविजयवर्णनम्	१०६-१११	६१
विविधविद्वद्वैदुष्यवर्णनम्	११२-१४८	६५
विविधस्थापत्यादिकलासम्पद्वर्णनम्	१४९-१६०	८४
काव्योपसंहारारम्भः	१६१-१६७	९०

***

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

श्रीताराचरणशर्मभट्टाचार्यविरचितम्

भारतवसुन्धरासान्त्वनम्

गीतिकाव्यम्

सान्वयगङ्गाख्यहिन्दीव्याख्यासंवलितम्

भारतवसुन्धरासौन्दर्यवर्णनम्–

जय भारतभूमि भासि विश्वभुवनन्दिता
मुहुरमराः सन्ति सुमुखि तव वैभवविस्मिताः।
हिमगिरिवरहीरकमयमुकुटस्तव भासते
सुरसरिदियमुरसि विमलहारस्तव राजते।।१।।

यस्तु स्मृतिपथमागतोऽपि तापत्रयनाशकः
चरणकमलपूजकजनबोधविभवभाषकः ।
भुवनत्रयरक्षणाय येनाचमितं विषं
काशीपतिरातनोतु कुशलं स हि नोऽनिशम्।।

अन्वयः–भारतभूमि! जय, (त्वं) विश्वभुवनवन्दिता भासि। सुमुखि! अमराः मुहुः तव वैभवविस्मिताः सन्ति। तव हिमगिरिवरहीरकमयमुकुटः भासते। तव उरसि इयं सुरसरित् विमलहारः राजते।।१।।

भारतभूमि के ऐश्वर्य एवं सौन्दर्य का वर्णन–

अर्थ–हे भारतभूमि! तुम्हारी जय हो। तुम सम्पूर्ण भुवनों द्वारा वन्दित होकर देदीप्यमान हो। हे सुमुखि। देव भी तुम्हारे वैभव से वार-वार विस्मित होते हैं। तुम्हारा यह हिमालयरूपी उच्चकोटि के हीरों का मुकुट प्रदीप्त हो रहा है, तथा तुम्हारे वक्षःस्थल पर यह सुरसरित् (गङ्गा) रूपी विमलहार शोभित हो रहा है।।१।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

काव्यत्वविमर्श—हिमगिरि पर हीरकमयमुकुट का आरोप होने से तथा सुरसरित् गङ्गा पर विमलहार का आरोप होने से रूपक अलङ्कार है। मध्यम समास युक्त रचना होने के कारण पाञ्चालीरीति तथा कोमल वर्णों का आधिक्य होने से माधुर्य गुण है। विभावभूत भारतभूमि के गुणों का वर्णन होने के कारण कवि-निष्ठ-भारतभूमि-विषयक भावध्वनि व्यञ्जित हो रही है॥१॥

चुम्बति तव चरणाम्बुजमम्बुधिरपि दण्डवत्
कम्बुबहुल मौक्तिकदल मणिकदम्बमाददत्।
प्रणमति तव पादपद्मम्बरतलचुम्बिभिः
शतसहस्रमूर्द्धभिरिव तुङ्गोज्ज्वलवीचिभिः॥२॥

अन्वयः—कम्बुबहुलमौक्तिकदलमणिकदम्बम् आददत् अम्बुधिः अपि दण्डवत् तव चरणाम्बुजं चुम्बति, अम्बरतलचुम्बिभिः तुङ्गोज्ज्वलवीचिभिः शतसहस्रमूर्द्धभिः इव तव पादपद्मं प्रणमति॥२॥

अर्थ—शङ्खों की बहुलता से युक्त मोतियों एवं मणियों की राशि लेकर यह समुद्र भी दण्डवत् विनम्र हो कर तुम्हारे चरण–कमलों का चुम्बन कर रहा है, तथा आकाश का चुम्बन करने वालीं (स्पर्श करने वालीं–अत्युच्च) उज्ज्वल तरङ्गों द्वारा मानो अपने लाखों शिरों से तुम्हारे चरणकमलों में प्रणाम अर्पित कर रहा है॥२॥

काव्यविमर्श—प्रणामकर्त्ता अम्बुधि का दण्ड से साधर्म्य वर्णित है, अतः उपमालङ्कार तथा उच्चतरङ्गों की शतसहस्रमूर्धारूप में सम्भावना की गयी है, अतः उत्प्रेक्षालङ्कार है। गुणरीत्यादि पूर्ववत्॥२॥

करधृतनवपल्लवदलचामर इव किङ्करः
मलयशिखरिमरुदभिमुखमञ्चति हिमशीकरः।
चन्दनरसबिन्दुभिरिव किरणैस्तव चन्द्रमाः
स्नपयति वपुरवनीश्वरि! परिचरति च ते रमा॥३॥

अन्वयः—किङ्करः इव करधृतनवपल्लवदलचामरः हिमशीकरः मलय-शिखरिमरुत् (तव) अभिमुखम् अञ्चति। चन्द्रमाः चन्दनरसबिन्दुभिः इव किरणैः तव वपुः स्नपयति। अवनीश्वरि! रमा च ते परिचरति॥३॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अर्थ—सेवक के समान हाथों में नवपल्लवदलरूपी चामर लेकर शीतल जलकणों का वाही यह मलयपर्वत की ओर से (दक्षिण दिशा से) आने वाला पवन तुम्हारे अभिमुख आ रहा है। यह चन्द्रमा चन्दन-रस की बिन्दुओं के समान (शीतल) अपनी किरणों से तुम्हारे शरीर को स्नान करा रहा है। हे अवनीश्वरि! ये महालक्ष्मी तुम्हारी सेवा कर रहीं हैं॥३॥

काव्यत्वविमर्श—पद्य के पूर्वार्द्ध में नवपल्लदल पर चामर का आरोप होने से रूपक, मलयमरुत् का किङ्कर से साधर्म्य वर्णित होने से उपमा है, उपमा की सिद्धि के लिये साधारण धर्मभूत रूपक है, अतः दोनों का अङ्गाङ्गिभावरूप सङ्करालङ्कार है। उत्तरार्ध में चन्द्रकिरणों का चन्दनरसबिन्दुओं से साधर्म्य वर्णित है, अतः उपमालङ्कार है॥३॥

अमृतकुम्भधन्वन्तरिधन्यधवलवाजिभिः
सह गजेन्द्रमन्दारकनन्दनवनराजिभिः।
मन्दरगिरिगुरुमन्थनदुग्धसिन्धुमन्दिरा-
दुदगमदियमलसगतिभिरुद्यदिन्दुरिन्दिरा ॥४॥

अन्वयः—मन्दगिरिगुरुमन्थनदुग्धसिन्धुमन्दिरात् अमृतकुम्भधन्वन्तरिधन्य-धवलवाजिभिः गजेन्द्रमन्दारकनन्दनधनराजिभिः सह इयम् उद्यदिन्दुः (इव) इन्दिरा अलसगतिभिः (उपलक्षिता सती) उदगमत्॥४॥

अर्थ—मन्दरगिरि के द्वारा गुरुतया मथित क्षीरसागर से अमृतकलश, धन्वन्तरि (देव-वैद्य) एवं धन्य (सुकृति) धवलवर्ण के अश्व (उच्चैःश्रवा) के साथ, तथा गजेन्द्र (ऐरावत), मन्दारक वृक्ष एवं नन्दनवन की पङ्क्तियों के साथ, यह उदित होते हुए चन्द्र के समान (गौरवर्ण की) इन्दिरा (महालक्ष्मी) अलस गतियों से (उपलक्षित होकर) उदित हुयी थी॥४॥

काव्यत्वविमर्श—पद्य में प्रयुक्त 'उद्यदिन्दुः' पद इन्दिरा का विशेषण या उपमान हो सकता है। विशेषणतया सङ्गति सम्भव न होने के कारण उसे उपमान मान कर अर्थ किया गया है। यद्यपि इवादि सादृश्यवाचक शब्द के अभाव में उपमान मानना उचित नहीं है, किन्तु इसके अतिरिक्त कोई अन्य सङ्गति भी सम्भव नहीं है, अतः उक्त योजना स्वीकार करने में कोई दोष नहीं है॥४॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

भूषयति तवाङ्गयष्टिमिन्दिरा तव किङ्करी
सयवसघनधान्यगुच्छराशिभिरवनीश्वरि ।
स्वर्णपुष्पराशिभिरिव सर्षपकुसुमैस्तनु-
मावृणोति सुरसुन्दरि कमला तव सा ननु।।५।।

अन्वयः—हे अवनीश्वरि! (इयम्) तव किङ्करी इन्दिरा सयवसघनधान्य-गुच्छराशिभिः तवाङ्गयष्टिं भूषयति। हे सुरसुन्दरि! ननु सा कमला स्वर्णपुष्पराशिभिः इव सर्षपकुसुमैः तव तनुम् आवृणोति।।५।।

अर्थ—हे अवनीश्वरि! यह तुम्हारी सेविका इन्दिरा (महालक्ष्मी) (हरित् वर्ण की) घाँस के साथ सघन धान्यों (फसलों) की गुच्छराशियों (बालियों) से तुम्हारी अङ्गयष्टि (देह, भारतभूभाग) को अलङ्कृत कर रही है। हे सुरसुन्दरि! वह विख्यात कमला भी स्वर्ण की पुष्पराशि के समान सरसों के पुष्पों द्वारा तुम्हारे तनु को आवृत (आच्छादित-अलङ्कृत) कर रही है।।५।।

काव्यत्वविमर्श—सर्षपकुसुमों का साधर्म्य स्वर्णपुष्पराशि से वर्णित होने से उपमालङ्कार है।।५।।

सर्षपकुसुमेषु तेषु पतन्ति मधुपतङ्गाः
विहरन्त्यपि मधु हरन्ति कर्मणि लसदभङ्गाः।
विहितकोषभवननिहितमधवस्ते साधवः
रक्षन्ति च जानन्ति न हन्त सन्ति दस्यवः।।६।।

अन्वयः—(इमे) मधुपतङ्गाः तेषु सर्षपकुसुमेषु पतन्ति, कर्मणि लसदभङ्गाः (ते) विहरन्ति, मधु अपि हरन्ति। विहितकोषभवननिहितमधवः ते रक्षन्ति (अतः) साधवः (प्रतीयन्ते किन्तु जनाः) न जानन्ति, हन्त ते दस्यवः सन्ति।।६।।

अर्थ—ये मधुपतङ्ग (भ्रमर) उन सरसों के पुष्पों पर टूट पड़ते हैं, अपने कर्म में सँल्लग्न वे विहार भी करते है, तथा मधु (पुष्परस) का हरण भी करते हैं। अपने बनाये गये कोशभवनों में मधु को रखने (संगृहीत करने) वाले वे भ्रमर उसकी रक्षा करते हैं, अतः साधु लगते हैं, किन्तु लोग नहीं जानते कि वे वस्तुतः दस्यु (डाकू) हैं।।६।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

विगलितकलधौतैरिव धौतान्यखिलानां
विकसितनवकम्रसुषमकुङ्कुमकुसुमानाम् ।
क्षेत्राण्यथ कुत्रचिदपि राशिभिरिह यूनां
प्रीणयन्ति लोचनशतमपि च कुलवधूनाम्।।७।।

अन्वयः—अथ कुत्रचित् विगलितकलधौतैः इव अखिलानां विकसितनवकम्रसुषमकुङ्कुमकुसुमानां राशिभिः धौतानि क्षेत्राणि अपि यूनां कुलवधूनां च लोचनशतम् अपि प्रीणयन्ति।।७।।

अर्थ—कहीं-कहीं भूभाग पर पिघले हुए स्वर्ण के समान (पीत वर्ण के) विकसित, नवीन, मनोहर सुषमा सम्पन्न, समस्त कुङ्कुम-कुसुमों की राशियों के द्वारा प्रक्षालित (आच्छादित) क्षेत्र भी युवकों तथा कुलवधुओं के लोचनशत को तृप्त कर रहे हैं।।७।।

काव्यत्वविमर्श—कुङ्कुमकुसुमराशि का साधर्म्य विगलितकलधौत से वर्णित होने से उपमालङ्कार है।।७।।

नवकलायकुसुमैः किल चनकपुष्पगुच्छैः
शाद्वलदल-चञ्चल-लघुचटुल-विहगपुच्छैः।
नटमयूर-मणिमयूख-चपल-पिच्छपद्धति
क्षेत्रं तव शबलितमिव नयनं किल हरति।।८।।

अन्वयः—नवकलायकुसुमैः चनकपुष्पगुच्छैः, शाद्वलदलचञ्चललघुचटुलविहगपुच्छैः, किल नटमयूरमणिमयूखचपलपिच्छपद्धति (अत एव) शबलितम् इव तव क्षेत्रं किल नयनं हरति।।८।।

अर्थ—नव विकसित कलाय के कुसुमों से, चनों के पुष्पों के गुच्छों से तथा हरी घाँस पर फुदकते हुए चञ्चल पक्षियों की पूँछों से शबलित (नाना वर्णों का) यह तुम्हारा, नर्तक मयूरों की मणि की किरणों के समान चञ्चल पिच्छ-पद्धति (मोर-पंखों) से अलङ्कृत क्षेत्र, निश्चय ही नयनों को हर रहा है। (देखने में अत्यन्त मनोहर लग रहा है।)।।८।।

काव्यत्वविमर्श—विविध-विशषणों से युक्त भूक्षेत्र को शबलित के रूप में सम्भावित किया गया है, अतः उत्प्रेक्षा-अलङ्कार है।।८।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

क्षेत्राणि च प्रीणयन्ति तैश्च तैश्च लोचनं
गृहमागतशस्यराशिभिरपि तनोति जीवनम्।
वितरन्ति च पयांसि तव मातर इव धेनवः
तृप्यन्ति च येन जननि! सततं तव सूनवः।।९।।

अन्वयः—तैः च तैः च (शस्यैः आच्छादितानि) क्षेत्राणि लोचनं प्रीणयन्ति। गृहम् आगतशस्यराशिभिः अपि (भवती) जीवनं तनोति। तव धेनवः च मातरः इव पयांसि वितरन्ति, जननि! येन च तव सूनवः सततं तृप्यन्ति।।९।।

अर्थ—ये अनेक शस्यों (धान्यों) से अलङ्कृत क्षेत्र (खेत) नेत्रों को सन्तृप्त कर रहे हैं, तथा (खलिहानों) से घर आयी हुयी शस्यराशि (अन्न-राशि) द्वारा तुम भारतवासियों के जीवन को विस्तृत (संरक्षित) कर रही हो। ये तुम्हारी गायें माताओं के समान लोगों को दुग्ध वितरण कर रहीं हैं, हे जननि! उस दुग्ध से तुम्हारे पुत्र (भारतवासी) तृप्त हो रहे हैं।।९।।

काव्यत्वविमर्श—प्रथम पाद में स्थित बहुवचनान्त कर्तृपद 'क्षेत्राणि' का द्वितीय पादस्थ 'तनोति' के साथ सम्बन्ध न बनने के कारण कर्तृपद 'भवती' का अध्याहार करके वाक्यार्थ निष्पादित किया गया है। उत्तरार्ध में धेनुओं की उपमा माताओं से दी गयी है, अतः उपमा अलङ्कार है।।९।।

कनक-रजत-रत्नराजि-मञ्चवञ्जलिमजस्रं
कमला तव पदकमले यच्छति निधिसहस्रम्।
तटिनीजलपूर्णार्णव इव तव धनकोषः
शुष्यति नहि हृतधनोऽपि तेन न किमु तोषः।।१०।।

अन्वयः—(इयम्) कमला अजस्रं कनकरजतरत्नराजिमञ्चवञ्जलिं निधिसहस्रं तव पदकमले यच्छति। तटिनीजलपूर्णार्णवः इव तव धनकोषः हृतधनः अपि नहि शुष्यति। किमु तेन तोषः न?।।१०।।

अर्थ—यह कमला स्वर्ण, रजत एवं रत्नराशि से परिपूर्ण अञ्जलि से हजारों निधियाँ तुम्हारे चरण-कमल में अर्पित कर रही है। नदियों के जल से परिपूर्ण समुद्र के समान यह तुम्हारा धनकोष (खजाना) धन-हरण करने पर भी सूखता नहीं है (रिक्त नहीं होता है)। क्या इससे तुमको सन्तोष नहीं है? (अक्षय-निधि की स्वामिनी होने के कारण तुम्हें धन विषयक चिन्ता से मुक्त होकर सन्तुष्ट होना चाहिए)।।१०।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

काव्यत्वविमर्श—धनकोष की उपमा तटिनीजलपूर्णार्णव से दी गयी है, अत: उपमालङ्कार है॥१०॥

पुञ्जपुञ्जखद्योतकहीरकमणिभानुकं
धत्से गिरिकुचशाद्वलमरकतमयकञ्चुकम्।
तडित्कनकसूत्रजडितजलदजालवसने-
नाऽऽवृणोषि वरतनुमपि निर्झरझररसने!॥११॥

अन्वयः—हे निर्झरझररसने! (त्वम्) पुञ्जपुञ्जखद्योतकहीरकमणिभानुकं गिरिकुचशाद्वलमरकतमयकञ्चुकं धत्से। वरतनुम् अपि तडित्कनकसूत्रजडित-जलदजालवसनेन आवृणोषि॥११॥

अर्थ—हे निर्झरधाररूपी रसना (काञ्ची, करधनी) को धारण करने वाली वसुधे! तुम अपने पर्वतरूपी कुचों (स्तनों) पर शाद्वल (हरी घाँस) रूपी मरकतमय कञ्चुक को धारण करती हो, वह कञ्चुक अनेक झुण्डों में उड़ने वाले जुगनूँ रूपी हीरे-मणियों की किरणों से युक्त है। तुम विद्युतरूपी सुवर्णसूत्रों जटित जलदसमूहरूपी वस्त्र से अपने मनोहर शरीर को भी आवृत (अलङ्कृत) करती हो॥११॥

काव्यत्वविमर्श—खद्योतों पर हीरकमणियों का, गिरि पर कुच का, शाद्वल पर मरकमय-कञ्चुक का, तडित् पर कनकसूत्र का, जलद–जालपर वसन का तथा निर्झरझर पर रशना का आरोप होने से साङ्ग–परम्परित रूपक अलङ्कार है। भारतवसुन्धरा पर नायिका का आरोप अर्थ है॥११॥

जाम्बूनदनदरशने विन्ध्याचलनितम्बे
मधुरजम्बुजम्बीरकरम्भाफलकदम्बे ।
निजपरजनमविचार्य च वितरसि चिरमन्नं
व्याप्नोति च परभुवमपि भगवति तव पण्यम्॥१२॥

अन्वयः—जाम्बूनदनदरशने! विन्ध्याचलनितम्बे! मधुरजम्बुजम्बीरकरम्भा-फलकदम्बे! (त्वम्) निजपरजनम् अविचार्य चिरम् अन्नं वितरसि। भगवति! तव पण्यं च परभुवम् अपि व्याप्नोति॥१२॥

अर्थ—हे जाम्बूनदनद (स्वर्णनद-शोणनद) रूपी रशना को धारण करने

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

वाली! विन्ध्याचलरूपी नितम्बों वाली! मधुर जामुन, नीबू, केला आदि फलों के कदम्बों (ढेरों) (को उत्पन्न करने) वाली भारतवसुन्धरे! तुम अपने-पराये का विचार किये विना सबको अन्न का वितरण करती हो। हे भगवति! तुम्हारे पण्य (विक्रेय-पदार्थ) वैदेशिक भूमियों (बाजारों) को भी व्याप्त किये हुए हैं।।१२।।

काव्यत्वविमर्श—जाम्बूनदनद पर रशनाका एवं विन्ध्याचल पर नितम्ब का आरोप होने से रूपक अलङ्कार है।।१२।।

गायन्ति च तव यशांसि कलकोकिलपटला
मधुरं मधुमत्ता इव मधुपाः किल चपलाः।
उषसि राजराजेश्वरि! विहगकण्ठगीतिभि-
र्गीतिभिरिव वन्दिनां हि जागर्षि समृद्धिभिः।।१३।।

अन्वयः—कलकोकिलपटलाः, मधुमत्ताः इव चपलाः मधुपाः च, तव यशांसि किल गायन्ति। हे राजराजेश्वरि! वन्दिनां गीतिभिः इव, समृद्धिभिः विहगकण्ठगीतिभिः जागर्षि।।१३।।

अर्थ—मनोहर कोकिल-कुल तथा मदमत्त से ये चञ्चल भ्रमर तुम्हारे यश का मधुर गान कर रहे हैं। हे राजराजेश्वरि! तुम बन्दियों (स्तुतिपाठकों) की गीतियों के समान पक्षियों की समृद्ध गीतियों द्वारा जागती हो।।१३।।

काव्यत्वविमर्श—मधुपों में मधुमत्तता की सम्भावना होने से उत्प्रेक्षा तथा विहगकण्ठगीतियों की उपमा वन्दिगीतियों से दिये जाने से उपमा–अलङ्कार है। 'समृद्धिभिः' पद का 'गीतिभिः'' से विशेषणतया अन्वय सम्भव नहीं हो रहा है। मेरी दृष्टि से यदि 'समृद्धाभिः' पाठ होता तो समाधान हो जाता, किन्तु छन्दोभङ्ग होने के कारण उक्त परिवर्तन सम्भव नहीं है। कविप्रयुक्त पद का सम्मान करते हुए परिवर्तन के विना ही उचित अर्थ किया गया है।।१३।।

त्वमसि तमसि मोहसदसि विमलचन्द्रचन्द्रिका
विलसितसितहसितसुरभियूथिवकुलमल्लिका।
सुरभिमधुरमधुरपनसलकुचचूतमेदुरा
हससि लससि वितरसि फलमुन्नतगिरिबन्धुरा।।१४।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अन्वयः—उन्नतगिरिबन्धुरा त्वम् मोहसदसि तमसि विमलचन्द्रचन्द्रिका असि। विलसितसितहसितसुरभियूथिवकुलमल्लिका हससि, सुरभिमधुरमधुरपनसलकुचमेदुरा लससि, फलं वितरसि॥१४॥

अर्थ—ऊँचे पर्वतों से मनोहर या उन्नतावनत (हे वसुन्धरे!) तुम अन्धकारमय मोह की सभा में चन्द्रमा की विमल चन्द्रिका हो। शोभा सम्पन्न, श्वेत, हँसते हुए, सुगन्धित, यूथिका, वकुल एवं मल्लिका के पुष्पों द्वारा हँसती हो। सुगन्धित, मधुर-मधुर कटहल, लीची एवं आम्रफलों से मेदुर (परिपूर्ण) होकर तुम शोभित होती हो तथा (इन सब के) फलों का वितरण करती हो॥१४॥

काव्यत्वविमर्श—मोहसदस् पर तमस् का आरोप तथा भारतवसुन्धरा पर चन्द्रचद्रिका का आरोप होने से रूपक अलङ्कार है। माल्लिकान्तपद, मेदुरान्तपद एवं फलपद का हससि, लससि एवं वितरसि क्रियाओं से क्रमशः अन्वय होने के कारण यथाक्रम अलङ्कार है॥१४॥

गगनं तव चन्द्रातप उज्ज्वलशततारकं
निशि विभाति राजेश्वरि! धृतशतशतहीरकम्।
अद्यापि च तव दिवसे स्फुरितनयनमाननं
स्फुटति च तव सरसि सरसि कान्तकमलकाननम्।।१५।।

(स्फुरतीति मूले। स्फुटतीति प्रक्रमरक्षायै वक्तव्यं विकचमानमिति। तारकः, हीरकः इति मूलम्।)

अन्वयः—हे राजराजेश्वरि! निशि चन्द्रातपे उज्ज्वलशततारकं तव गगनं धृतशतशतहीरकं विभाति। अद्यापि च दिवसे तव आननं स्फुरितनयनं (विभाति, यतः) तव सरसि सरसि कान्तकमलकाननं स्फुटति॥१५॥

अर्थ—हे राजेश्वरि! रात्रि में चन्द्रिका में सैकड़ों उज्ज्वल ताराओं से अलङ्कृत तुम्हारा आकाश हजारों हीरों को धारण किया हुआ सा शोभित होता है। आज भी दिन में तुम्हारा मुख स्फुरित–नयनों से अलङ्कृत होता है, क्यों कि तुम्हारे प्रत्येक सरोवर में मनोहर कमलों का वन खिलता है॥१५॥

काव्यत्वविमर्श—गगन द्वारा धारित उज्ज्वलशततारक में शतशतहीरक की सम्भावना की गयी है तथा कान्तकमलकानन में स्फुरितनयन की सम्भावना की गयी है अतः उत्प्रेक्षा अलङ्कार है॥१५॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

भगवद्रामचन्द्रवर्णनम्—

(युग्मकम्)

अथ बबन्ध भुवनबन्धुरम्बुधिमपि भीषणं
दशकन्धरमिन्द्रविजयि लङ्केश्वररावणम्।
यो जघान जानासि न दनुजसिन्धुमन्दरं
श्यामलनवदूर्वादलसुन्दररुचिकन्दरम् ।।१६।।

रामचन्द्रमपि न वेत्सि न जानासि जानकीं
रघुकुलपतिमहिषीं किमु दुहितरमपि तावकीम्?
लक्ष्मणमपि भरतमपि न रामायणगायनं
स्मरसि तु ननु वाल्मीकिं विश्वभुवनपावनम्।।१७।।

अन्वयः—अथ भुवनबन्धुः (यः) भीषणम् अपि अम्बुधिं बबन्धः, यः दशकन्धरम् इन्द्रविजयिलङ्केश्वररावणं जघान, तं श्यामलनवदूर्वादलसुन्दररुचिकन्दरं दनुजसिन्धुमन्दरं, रामचन्द्रम् अपि न जानासि, किमु रघुकुलपतिमहिषीं तावकीं दुहितरं जानकीम् अपि, लक्ष्मणम् अपि, भरतम् अपि न वेत्सि। ननु रामायणगायनं विश्वभुवनपावनं वाल्मीकिं तु स्मरसि?।।१६-१७।।

भगवान् रामचन्द्र जी एवं महर्षि वाल्मीकि का वर्णन—

अर्थ—जो इस भुवन (भूमण्डल) के बन्धु (कल्याणकर्त्ता) थे, जिन्होंने दश शिरधारी, इन्द्र को भी जीतने वाले, लंकेश्वर रावण को मारा था, जो दानवरूपी समुद्र को मथने वाले मन्दराचल थे, जो श्यामल-नवदूर्वादलों के समान कान्ति से मनोहर थे, ऐसे भगवान् रामचन्द्रजी को नहीं जानती? क्या तुम रघुकुल की महारानी, तुम्हारी अपनी ही पुत्री भगवती जानकी तथा लक्ष्मण और भरत को भी नहीं जानती? रामायण के गायक, सम्पूर्ण भूमण्डल को पवित्र करने वाले महर्षि वाल्मीकि का स्मरण तो कर रही हो?।।१६-१७।।

काव्यत्वविमर्श—दनुजों पर सिन्धु का आरोप तथा रामचन्द्रजी पर मन्दर का आरोप होने से रूपक अलङ्कार है। वाल्मीकि के 'रामायणगायन' एवं विश्वभुवन-पावन विशेषण साभिप्राय हैं, अतः परिकर अलङ्कार है।।१६-१७।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

रामोऽद्य न, सीतापि न, न लक्ष्मणो, न भरतः
कविगुरुपि न वाल्मीकिरङ्घ्रिपूतभारतः।
अधुनापि प्लावयति हि विश्वममृतवर्षिणी
तस्य रामचरितगीतिपीयूषतरङ्गिणी।।१८।।

(मूले 'न लक्ष्मणो भरत' इति लेखः)

अन्वयः—अद्य रामः न, सीता अपि न, न लक्ष्मणः, न भरतः, अङ्घ्रिपूतभारतः कविकुलगुरुः वाल्मीकिः अपि न, हि अधुना अपि तस्य अमृतवर्षिणी रामचरितगीतिपीयूषतरङ्गिणी विश्वं प्लावयति।।१८।।

अर्थ—आज रामचन्द्रजी नहीं हैं, सीताजी भी नहीं हैं, लक्ष्मणजी नहीं हैं, भरत जी भी नहीं हैं तथा अपने चरणों से भरतभूमि को पवित्र करने वाले कविकुलगुरु महर्षि वाल्मीकि जी भी नहीं हैं, किन्तु अमृत का वर्षण करने वाली उनकी रामचरितगीतिरूपिणी अमृतसरिता (वाल्मीकीय-रामायण) आज भी विश्व को आप्लावित (भक्ति-ज्ञानामृत में मग्न) कर रही है।।१८।।

काव्यत्वविमर्श—रामचरितगीति पर पीयूषरङ्गिणी का आरोप होने से रूपक अलङ्कार है।।१८।।

श्रीकृष्णचन्द्रचरित्रवर्णनम्—

इन्दीवरमरकतनवजलधररुचिसुन्दरः
कुन्ददशनमन्दस्मितबन्धुरमधुराधरः ।
नीलनभसि दिनमणिरिव निकषोपलवक्षसि
कौस्तुभमणिरमुमपि किमु मनसि न ननु रक्षसि।।१९।।

अन्वयः—(यः) इन्दीवरमरकतनवजलधररुचिसुन्दरः कुन्ददशनमन्दस्मितवन्धुरमधुराधरः (आसीत्), नीलनभसि दिनमणिः इव (यस्य) निकषोपलवक्षसि कौस्तुभमणिः (रराज), ननु अमुम् अपिं मनसि किमु न रक्षसि?।।१९।।

भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र जी के चरित का वर्णन—

अर्थ—जो नीलकमल, मरकतमणि तथा नवजलधर की क़ान्ति के समान सुन्दर थे, कुन्द–कुसुमों के समान श्वेत दशनपङ्क्ति से मनोहर मन्दस्मित

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

से रमणीय, मधुर-अधरों को धारण करने वाले थे, जिनके निकषोपल के समान नीलवर्ण के वक्षःस्थल पर कौस्तुभमणि वैसे ही शोभित होती थी जैसे नीले आकाश में दिनमणि (भगवान् सूर्य) शोभित होते हैं, उनको (भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र को) भी मन में क्यों रक्षित नहीं कर रही हो? (उनका स्मरण क्यों नहीं कर रही हो?)॥१९॥

काव्यत्वविमर्श—पूर्वार्द्ध में श्रीकृष्णचन्द्र की उपमा इन्दीवर मरकत, नवजलधर आदि अनेक उपमानों से दी गयी है, अतः मालोपमा अलङ्कार है। 'कुन्ददशन' में लुप्तोपमा अलङ्कार है। उत्तरार्द्ध में 'निकषोपलवक्षसि' में लुप्तोपमा तथा उस पर शोभित कौस्तुभमणि की उपमा नील-नभ में शोभित दिनमणि से दी गयी है, अतः उपमा-अलङ्कार है॥१९॥

सरलशिशुभिरपि युवतिभिरिह यः खलु मल्लैः
क्रीडति स्म वीरवृषभसबलमुक्तभल्लैः।
समरकुशलसबलबाहुयोद्धृपुरुषयूथैः
विजहार स हस्तिभिरपि धूलिधूसरविकुथैः॥२०॥

(मूले लेखः धूषरेति।)

अन्वयः—यः इह सरलशिशुभिः, युवतिभिः अपि, वीरवृषभसबलमुक्तभल्लैः मल्लैः खलु क्रीडति स्म, सः समरकुशलसबलबाहुयोद्धृपुरुषयूथैः, धूलि-धूसरविकुथैः हस्तिभिः अपि विजहार॥२०॥

अर्थ—जो यहाँ सरल शिशुओं के साथ, युवतियों के साथ तथा वीरों, वृषभों के समान बलशालियों, भालों का प्रहार करने वाले मल्लों के साथ क्रीडा करते थे। वे युद्ध में कुशल, बलवान बाहुओं से युद्ध करने वाले पुरुषों के समूह के साथ तथा धूलि से धूसर अत एव मलिन कुंथों (हाँथियों की पींठ पर विछाये जाने वाले आस्तरणों) वाले हाँथियों के साथ भी विहार (युद्ध-क्रीडा) करते थे॥२०॥

काव्यत्वविमर्श—शिशु-युवति आदि तथा मल्ल-योद्धा आदि परस्पर विरुद्ध पदार्थों के साथ क्रीडा करने के कारण विरोधाभास अलङ्कार माना जा सवता है। क्रीडा-क्रिया के भिन्न-भिन्न अर्थ करने पर परिहार सम्भव है। ओजो-गुण, गौडी-रीति है॥२०॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अस्त्रशस्त्रशातनपटुररिषु सम्यगचलः
बाहुयुद्धनिपुणोऽपि च गदायुद्धकुशलः।
हयगजयोर्नावोऽपि च चालनकृतकर्मा
गृहचत्वरसदसामपि कल्पितपरिकर्मा।।२१।।

(बाहयुद्धकुशल इति मूले लेखः, पुनरुक्तिपरिहाराय गदेति कृतः)

अन्वयः–(यः) अस्त्रशस्त्रशातनपटुः अरिषु सम्यक् अचलः, बाहुयुद्धनिपुणः अपि गदायुद्धकुशलः च, हयगजयोः, नावः अपि च चालनकृतकर्मा, गृहचत्वरसदसाम् कल्पितपरिकर्मा अपि (आसीत्)।।२१।।

अर्थ–जो अस्त्र-शस्त्रों के शातन (तीक्ष्णीकरण) में पटु थे, शत्रुओं के समक्ष सदा अचल (निर्भय) थे, बाहुयुद्ध में भी निपुण थे तथा गदायुद्ध में भी कुशल थे। जिन्होंने घोड़ों, हाथियों तथा नौकाओं के सञ्चालन का कार्य भी किया था तथा जो गृहों, आँगनों तथा सभागारों के परिष्कार में भी दक्ष थे।।२१।।

काव्यत्वविमर्श–श्रीकृष्णचन्द्र के समस्त विशेषण उनके सर्वतोमुखी सामर्थ्य को व्यक्त करके उनका महापुरुषत्व प्रमापित कर रहे हैं, अतः साभिप्राय हैं, अत एव परिकर अलङ्कार है।।२१।।

योद्‌धृषु युधि विचचार च स खलु परमयोधः
ज्ञानसदसि विरराज च सोऽप्यगाधबोधः।
नरपतिपरिषदि च मन्त्रमददादिव मन्त्रं
राजराजमपि परितोऽचालयदिव यन्त्रम्।।२२।।

अन्वयः–सः च परमयोधः युधि योद्‌धृषु खलु विचचार, अगाधबोधः च सः ज्ञानसदसि अपि विरराज, नरपतिपरिषदि च मन्त्रम् इव मन्त्रम् अददात्, राजराजम् अपि यन्त्रम् इव परितः अचालयत्।।२२।।

अर्थ–वे परमयोद्धा (भगवान् श्रीकृष्ण) युद्ध में योद्धाओं के समक्ष विचरण करते थे। अगाधज्ञान–सम्पन्न वे ज्ञान–चर्चा की सभाओं में भी शोभायमान होते थे। राजाओं की सभाओं में वे मानो (वैदिक) मन्त्रों के समान (अकाट्य) मन्त्रों, (मन्त्रणाओं, विचारों) को देते थे तथा राजाओं के राजा (चक्रवर्ती सम्राट्) को भी यन्त्र के समान चारों ओर सञ्चालित करते थे।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

(जैसे चालक यन्त्र को स्वेच्छा से जैसे चाहता है वैसे सञ्चालित करता है, वैसे ही भगवान् श्रीकृष्ण भी बड़े-बड़े सम्राटों को अपनी इच्छानुसार सञ्चालित (आज्ञा मानने को बाध्य) करते थे। अथवा राजराज कुबेर को भी स्वेच्छानुसार यन्त्र की तरह सञ्चालित करते थे (आज्ञा देते थे)॥२२॥

काव्यत्वविमर्श–पूर्वार्द्ध में 'परमयोध:' एवं 'अगाधबोध:' विशेषण एवं तदन्वित क्रियायें पूर्ववत् साभिप्राय हैं–भगवान् की परमवीरता एवं विद्वत्ता को व्यक्त रहे हैं, अत: परिकर–अलङ्कार है। उत्तरार्द्ध में 'मन्त्रम् इव मन्त्रम्' में यमक एवं उपमा तथा 'राजराज' का सादृश्य यन्त्र से वर्णित है, अत: यहाँ भी उपमा-अलङ्कार है॥२२॥

वीणयापि वेणुनापि कण्ठेन च मधुरं
गायन्नपि युवतिवृन्दमकरोत् किल विधुरम्।
मुखमारुत-पूर्ण-विवर-शङ्ख-घोर-घोषं
व्यद्रावयदुत्थाप्य च निखिलभुवनकोषम्॥२३॥

अन्वयः–(सः) वीणया अपि, वेणुना अपि, कण्ठेन च मधुरं किल गायन् युवतिवृन्दम् अपि विधुरम् अकरोत्। मुखमारुतपूर्णविवरशङ्खघोरघोषं निखिलभुवनकोषं च उत्थाप्य व्यद्रावयत्॥२३॥

अर्थ–वे वीणा से, वेणु (मुरली) से तथा कण्ठ से मधुर गाते हुए युवति-वृन्द को भी विधुर (विकल, प्रेम-परवश) कर देते थे। उन्होंने (युद्ध के समय) अपने मुख के मारुत के पूर्ण विवर वाले शङ्ख के भयंकर घोष से पूर्ण निखिल भुवनकोष (आकाशसहित-भूमण्डल) को उठाकर विद्रावित कर दिया था। (महाभारत-युद्ध में एकत्रित समस्त भूमण्डल के राजाओं को भयभीत-पलायनोन्मुख कर दिया था)॥२३॥

काव्यत्वविमर्श–वीणा-वेणु आदि वाद्यों की मधुर ध्वनि से युवतियों को विह्वल करने वाले श्रीकृष्णचन्द्रजी का शङ्ख के घोर-घोष द्वारा निखिल भुवनों को विद्रावित करने का सामर्थ्य भी वर्णित कर कवि ने उनका जगत्प्रभुत्व व्यञ्जित किया है॥२३॥

अपहाय च सकलवर्षमवततार विश्रुते
त्वदुरसि किल कृष्णचन्द्र इन्दिरापतिराप्लुते।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सुकृतान्यवगच्छसि न किमुरगपतिनिवासि-
न्युरसि यस्य चरणचिह्नमद्यापि च दधासि।।२४।।

अन्वयः– (सः) इन्दिरापतिः कृष्णचन्द्रः सकलवर्षम् अपहाय च विश्रुते आप्लुते त्वदुरसि किल अवततार। हे उरगपतिनिवासिनि! (त्वम्) यस्य चरणचिह्नम् च अद्यापि उरसि दधासि, किम् (एतानि) सुकृतानि न अवगच्छसि?॥२४॥

अर्थ–उन इन्दिरापति (कमलापति) भगवान् कृष्णचन्द्र ने भूमण्डल पर स्थित अन्य सम्पूर्ण देशों को छोड़ कर जगद्विख्यात प्रशस्त तुम्हारे वक्षःस्थल (भारतभूमि–व्रजक्षेत्र) पर अवतार लिया था। हे उरगपति (शेषनाग–अनन्त) के (शीर्ष के) ऊपर निवास करने वाली भगवति! भारतवसुन्धरे! जिन भगवान् श्रीकृष्ण के चरणचिह्नों को (वृन्दावन–द्वारका आदि पवित्र स्थलों पर शिलाओं पर अङ्कित श्रीकृष्ण के चरण चिह्नों को) तुम अपने हृदय पर आज भी धारण करती हो। तुम्हें अपने इन पुण्यों का बोध नहीं है?॥२४॥

काव्यत्वविमर्श–कवि ने भारतवसुन्धरा को भगवान् की अवतार भूमि होने के तथा आज भी उनके चरणचिह्न धारण करने के गौरव का स्मरण करा कर सान्त्वना प्रदान की है॥२४॥

महर्षिबादरायणवैदुष्यवर्णनम्–

इत्यादिकमितिहासं काव्यामृतधारं
तुच्छीकृतदुग्धोदधिरससागरसारम् ।
तव भारतभूमि! मातरुरसि महाभारतं
योऽसृजत् तमपि न वेत्सि करुणार्णवदैवतम्।।२५।।

अन्वयः–(मातः) भारतभूमि! इत्यादिकम् इतिहासं (तथा) यः तव उरसि काव्यामृतधारं तुच्छीकृतदुग्धोदधिरससागरसारं महाभारतम् असृजत्, तं करुणार्णवदैवतं (महर्षिं वेदव्यासम्) अपि न वेत्सि?॥२५॥

महर्षि बादरायण (वेदव्यास) के वैदुष्य का वर्णन–

अर्थ–इत्यादि (उपर्युक्त भगवान् कृष्ण के समय के) इतिहास को तथा जिन्होंने तुम्हारे हृदय पर (भारत–भूमि पर) काव्यरूपी अमृत को धारण करने

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

वाला या काव्यामृत की धारास्वरूप तथा क्षीरसागर तथा रससागर (इक्षुरसार्णव) के सार को तुच्छ बनाने वाला (इनसे अ क माधुर्य युक्त, आनन्दप्रद) महाभारत नामक महान् ग्रन्थ का सृजन ि या था, उन करुणसागर के अधिष्ठातृ–देव (महर्षि वेदव्यास जी) को भी ह्रीं जान रही हो? (उनका भी स्मरण नहीं कर रही हो?॥२५॥

काव्यत्वविमर्श–काव्य पर अमृत का आरोप होने से रूपक तथा इस वैशिष्ट्य (आधिक्य) से महाभारत का दुग्धोदधि रससागर को तुच्छ बनाने का सामर्थ्य व्यक्त होने के कारण व्यतिरेक अलङ्कार है॥२५॥

षड्त्रिंशत्संख्यविपुलपुराणानि यो जगौ
मातः! खलु यस्य साध्वि! भवजलधौ द्वौ नगौ।
एकोऽस्ति च बोधोज्ज्वलदनलजालपुञ्जः
गिरिरपरो हरिहररतिसरिदावृतकुञ्जः॥२६॥

(मूले वृतपुञ्ज इत्येव लेखः। कथितपदत्वपरिहाराय तु पुकारः कुकारत्वेन दत्तः।)

अन्वयः– यः षट्त्रिंशत्–संख्यविपुलपुराणानि जगौ। मातः! साध्वि! यस्य भवजलधौ द्वौ नगौ (स्तः)। एकः (नगः) बोधोज्ज्वलदनलजालपुञ्जः (अस्ति) अपरः गिरिः हरिहररतिसरिदावृतपुञ्जः (अस्ति)॥२६॥

अर्थ–जिन्होंने विपुल कलेवर वाले छत्तीस पुराणों (अठारह महापुराणों तथा अठारह उपपुराणों) को गाया (रचा) था, तथा हे साध्वि! मातः! जिनके इस संसार रूपी सागर में (संसारसागर में डूबने से बचाने वाले) दो पर्वत (पर्वतों से अध्यवसित दो अचल महान् ग्रन्थ) प्रसिद्ध हैं–एक है ज्ञान से उज्ज्वल (देदीप्यमान) अनलजाल–पुञ्जस्वरूप (महाभारत) तथा दूसरा है–हरि (भगवान् विष्णु) तथा हर (भगवान् शङ्कर) की भक्तिरूपिणी सारिताओं से आवृत कुञ्जों वाला (श्रीमद्भागवतमहापुराण)। अथवा ज्ञान से उज्ज्वल अनलजाल वाला विन्ध्यपर्वत तथा हरि तथा हर की प्रेमास्पद नदी (गङ्गा) से आवृत कुञ्जों वाला हिमालय पर्वत॥२६॥

काव्यत्वविमर्श–भव पर जलधि का आरोप होने से रूपक अलङ्कार है। यदि नग का अर्थ पर्वत क्रिया जाय तो दो पर्वत विन्ध्य एवं हिमालय ही होगें किन्तु इनके परिचय के लिये जो विशेषण उपात्त किये गये हैं, वे इनमें

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पूर्णतः समन्वित नहीं होते इनका व्यासजी से विशेष सम्बन्ध भी प्रसिद्ध नहीं है, अतः नगों से अध्यवसित व्यास जी द्वारा रचित दो ग्रन्थों-भागवत-महाभारत रूप लाक्षणिक अर्थ करना उचित है। ये दोनों ग्रन्थ भवजलधि में डूबने से बचाने वाले भी है अतः जलधि में डूबने से बचाने वाले नगों (पर्वतों) से सादृश्य भी है जो साध्यवसाना लक्षणा का प्रयोजक है।।२६।।

भगवत्परशुरामशौर्यस्य भीष्मवीरतायाश्च वर्णनम्–

कदलीवनमिव हैहयभुजसहस्रमच्छिनत्
क्षत्रियकुलमस्तकमपि यो हि नित्यमकृन्तत्।
तमजयदपि भीष्म एव यः सुरसरिदपत्यम्
प्राणानपि परिजहार सत्याय च न सत्यम्।।२७।।

(मूले 'मस्तक इव' इति पाठः। मस्तकस्योपमानत्वे तदुपमेयवाचकपदाभावः तेन च इवस्य वैयर्थ्यम्, अतः 'मस्तकमपि' इति पाठोऽङ्गीकृतः। अपिना भुजसहस्रेण समुच्चितं मस्तकं कृन्तनक्रियायां कर्मत्वेनान्वेति)।

अन्वयः– यः हि हैहयभुजसहस्रं कदलीवनम् इव आच्छिनत्, क्षत्रियकुल-मस्तकम् अपि नित्यम् अकृन्तत्, तम् अपि भीष्मः एव अजयत्, सुरसरिदपत्यं यः सत्याय प्राणान् अपि परिजहार, सत्यं च न (परिजहार)।।२७।।

भगवान् परशुराम के शौर्य एवं भीष्म की वीरता का वर्णन–

अर्थ–जिन्होंने हैहय (हैहयवंशीय राजा सहस्रबाहु–अर्जुन) की सहस्र भुजाओं को कदली वन के समान (बिना किसी विशेष प्रयास के) काटा था, तथा क्षत्रियकुल के मस्तकों को भी जिन्होंने सदा काटा था, ऐसे उनको (परशुराम जी को) भी सुरसरित् गङ्गा के पुत्र भीष्म ने ही जीता था, जिन्होंने सत्य (की रक्षा) के लिये प्राणों को भी त्याग दिया था किन्तु सत्य को नहीं त्यागा था।।२७।।

काव्यत्वविमर्श–भुजसहस्र का सादृश्य कदलीवन से वर्णित है, अतः उपमा अलङ्कार है। हैहयवंशीय क्षत्रियों के विनाशक भगवान् परशुराम को जीतने वाले भीष्मजी के सामर्थ्य का हेतु है–'उनके द्वारा सत्य के लिये प्राणत्याग देना, किन्तु सत्य को न त्यागना' अतः वाक्यार्थहेतुक काव्यलिङ्ग अलङ्कार है। 'सत्यमेव जयते' का समर्थन भी हो रहा है।।२७।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

वासुदेवमपि विशिखं योऽधारयदारान्-
नो दधार पितुरपि यः प्रीणनाय दारान्।
शरशतमुखशयितोऽपि च विपुलान् पृथगभिधान्
धर्मान् किल धर्मसूनुमुपदिदेश विविधान्।।२८।।

अन्वयः– यः वासुदेवम् अपि आरात् अस्त्रम् अधारयत्, यः पितुः प्रीणनाय दारान् अपि नो दधार, शरशतमुखशयितः अपि धर्मसूनुं विपुलान् पृथगभिधान् विविधान् धर्मान् च उपदिदेश॥२८॥

अर्थ–जिन्होंने (पितामह भीष्म ने महाभारत युद्ध में) वासुदेव (भगवान् श्रीकृष्ण को) भी विशिख (अस्त्र) धारण करा दिया था, तथा जिन्होंने पिता को प्रसन्न करने के लिये पत्नी को भी धारण नहीं किया था (आजीवन विवाह नहीं किया था)। सैकड़ों शरों के अग्रभाग (शरशय्या) पर शयन करते हुए भी जिन्होंने धर्मपुत्र युधिष्ठिर को पृथक्-पृथक् नाम वाले विविध धर्मों का उपदेश दिया था। (ऐसे सत्यव्रती धर्मात्मा भीष्म को जनने वाली हे वसुन्धरे! आप सन्ताप मत करो, आज ऐसे वीर नहीं हैं किन्तु भविष्य में अवश्य उत्पन्न होगें जो तुम्हारे सन्ताप को दूर करेंगे)॥२८॥

काव्यत्वविमर्श–पद्य में वर्णित कृत्यों से भीष्म जी की परमवीरता, सत्यप्रतिज्ञता, जीवन्मुक्तता तथा अखिलधर्मज्ञता व्यक्त हो रही है॥२८॥

अर्जुनपराक्रमवर्णनम्–

अदहदहह खाण्डववनमाखण्डलपालितं
खण्डितशरसुरमण्डलभयविस्मयवीक्षितम् ।
स गाण्डीवकोदण्डकगुरुकुण्डलमण्डितः
पाण्डवकुलचण्डरश्मिरणताण्डवपण्डितः ।।२९।।

अन्वयः–अहह! (यः) खण्डितशरसुरमण्डलभयविस्मयवीक्षितम् आखण्डल-पालितं खाण्डववनम् अदहत्। गाण्डीवकोदण्डकगुरुकुण्डलमण्डितः सः (अर्जुनः) पाण्डवकुलचण्डरश्मिरणताण्डवपण्डितः (आसीत्)॥२९॥

अर्जुन के पराक्रम का वर्णन

अर्थ–अहह! जिन्होंने देवराज इन्द्र के द्वारा पालित, तथा खण्डित

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

वाणों वाले देवगणों के द्वारा भय तथा विस्मय से अवलोकित, खाण्डव वन को जलाया था। वे गाण्डीव धनुष से मण्डित तथा गुरु-कुण्डलों (बड-बड़े मनोहर कर्णाभूषणों) से अलङ्कृत (पाण्डुपुत्र अर्जुन) पाण्डुकुल के सूर्य तथा रणरूपी ताण्डव (नृत्य) के पण्डित थे॥२९॥

काव्यत्वविमर्श—अर्जुन पर चण्डरश्मि (सूर्य) तथा रण पर ताण्डव का आरोप होने से रूपक अलङ्कार है॥२९॥

पशुपतिमुदमुदपादयदायुधशतवर्षणैः
पाशुपतमवाप पापघातिशरममर्षणैः।
त्रिपुरनगरमिव धूर्जटिरुज्ज्वलकणवर्षिणा
स हि निवातकवचमदहदेकबाणवह्निना॥३०॥

अन्वयः—स हि अमर्षणैः आयुधशतवर्षणैः पशुपतिमुदम् उदपादयत्। पापघातिशरं पाशुपतम् अवाप। उज्ज्वलकणवर्षिणा एकबाणवह्निना पशुपतिः त्रिपुरनगरम् इव यः उज्ज्वलकणवर्षिणा एकवाणवह्निना निवातकवचम् अदहत्॥३०॥

अर्थ—उन्होंने असह्य सैकड़ों अस्त्रों की वर्षा करके पशुपति (भगवान् शंकर) को (अपनी वीरता द्वारा) प्रसन्न किया था तथा उनसे पापियों के घातक, पाशुपत नामक शर (पाशुपतास्त्र) को प्राप्त किया था। भगवान् धूर्जटि (शिव) ने जैसे उज्ज्वल अग्निकणों की वर्षा करने वाले एक अग्निवाण से त्रिपुरनगर को जलाया था, वैसे ही उन्होंने (अर्जुन ने) उज्ज्वल कणों की वर्षा करने वाले एक वाणरूपी अग्नि के द्वारा निवात-कवच को जला दिया था॥३०॥

काव्यत्वविमर्श—आयुधशत के वर्षण से पशुपति का मुदित होना आपाततः विरुद्ध है, क्यों कि अमर्षण-शरवर्षण कोप का हेतु है, मोद का नहीं अतः विरोधभास अलङ्कार है। आदिधनुर्धर भगवान् पशुपति अर्जुन के शौर्य की परीक्षा कर रहे थे, अतः शरवर्षण से उनका प्रसन्न होना स्वाभाविक है, अतः उक्त विरोध का परिहार हो जाता है। उत्तरार्ध में वाक्यार्थोपमा है॥३०॥

एकपाशुपतशरेण यो जघान वीर्यवान्
गगनचारिदृढहिरण्यपुरनिवासिदानवान्।
जित्वा यदुवीरान् निजवररुचिजितरोचनां
यो जहार हरिभगिनीं हरिणलोललोचनाम्॥३१॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अन्वयः– वीर्यवान् यः एकपाशुपतशरेण गगनचारिदृढहिरण्यपुरनिवासि-दानवान् जघान। यः यदुवीरान् जित्वा निजवररुचिजितरोचनां हरिणलोललोचनां हरिभगिनीं जहार॥३१॥

अर्थ–जिन वीर्यवान् (परमवीर अर्जुन) ने एकमात्र पाशुपत-शर से गगनचारी, सुदृढ़ हिरण्यपुर में निवास करने वाले दानवों को मारा था, तथा यदुवंशी वीरों को जीत कर, अपनी मनोहर कान्ति से रोचन (गोरोचन) को जीतने वाली (अत्यन्त गौरवर्ण की) तथा हरिण के लोचनो के समान चञ्चल लोचनों वाली हरि की भगिनी (भगवान् कृष्ण की भगिनी सुभद्रा) का हरण किया था॥३१॥

काव्यत्वविमर्श–अर्जुन की क्षत्रियोचित वीरता एवं तदनुकूल सुभद्राहरण का औचित्य वर्णित है॥३१॥

परिजहार मुकुटादिकराजवेशमार्यया
विचचार च वने वने भ्रातृभिश्च भार्यया।
तदपि तदपि दधदपि सति धूलिधूसरवल्कलं
स समियेष नित्यमरिषु मत्तकरिषु मङ्गलम्॥३२॥

अन्वयः– हे सति! यः मुकुटादिकराजवेशं परिजहार, आर्यया भार्यया भ्रातृभिः च (सह) वने–वने च विचचार। तदपि तदपि सः धूलिधूसरवल्कलं दधत् अपि मत्तकरिषु अरिषु नित्यं मङ्गलं समियेष॥३२॥

अर्थ–हे सति! जिन्होंने मुकुटादि राजोचित वेश को त्याग कर साध्वी पत्नी (द्रौपदी) एवं भाईयों के साथ नाना वनों में भ्रमण किया था। वहाँ अनेक कष्टों को सहते हुए जिन्होंने धूलिधूसरित वल्कलों को धारण किये हुए (शत्रुओं की दुरभिसन्धि के कारण राज्य से बहिष्कृत होकर वल्कलधारी वनवासी होकर) भी मदमत्तगज–स्वरूप शत्रुओं के मङ्गल की ही कामना की थी। (ऐसे अद्वितीय वीर धार्मिक क्षत्रिय अर्जुन आपके ही वक्षःस्थल पर अवतरित हुए थे। उनके शौर्य वीर्य एवं धैर्य का स्मरण करके, हे भारतवसुन्धरे! आप को अपने पुत्र पर गर्व होना चाहिये न कि मनोमालिन्य, अतः आप शान्त होइये॥३२॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

विविधसूत्रकारमहर्षिवर्णनम्–

कपिलः किल कलुषराशिनाशी स पतञ्जलिः
यजननिपुणजैमिनिरपि विवृतकर्मकन्दलिः।
द्वैयापन उदयमाप ऋषिकेशरिगौतमः
स च कणाद आससाद जननं मुनिसत्तमः।।३३।।

अन्वयः– कलुषराशिनाशी किल कपिलः, सः पतञ्जलिः, विवृतकर्मकन्दलिः यजननिपुणजैमिनिः अपि, द्वैपायनः (च) उदयम् आप। ऋषिकेशरिगौतमः, मुनिसत्तमः सः कणादः च जननम् आससाद।।३३।।

अनेक सूत्रकार महर्षियों का वर्णन–

अर्थ–कलुषराशि (पाप–पुञ्ज) के नाशक (विद्वेषी) कपिल, वे (प्रसिद्ध शेषावतार) महर्षि पतञ्जलि, कर्मकन्दली के विवेचक, यजननिपुण (यज्ञ-विद्या–व्याख्यापक एवं यज्ञकर्म में दक्ष) महर्षि जैमिनि एवं महर्षि द्वैयापन (वेदव्यास) ने यहीं उदय (जन्म) प्राप्त किया था। ऋषियों में श्रेष्ठ महर्षि गौतम तथा मुनियों में श्रेष्ठ महर्षि कणाद ने भी भारतभूमि पर ही जन्म लिया था।।३३।।

काव्यत्वविमर्श–उक्त सूत्रकार महर्षियों की जननी भारतवसुन्धरा को उनका स्मरण दिला कर सान्त्वना दी गयी है।।३३।।

तेन तेन मुनिना सति तव वक्षसि खानिताः
षड्दर्शनसिन्धव इह बन्धव इव मानिताः।
क्षारं किल सागरस्य सलिलं वितरन्ति ते
नियतममृतमभिनवमिव तत्र तत्र मन्त्रिते।।३४।।

अन्वयः– हे सति! (भारतवसुन्धरे!) तेन तेन मुनिना इह तव वक्षसि बन्धवः इव मानिताः षड्दर्शनसिन्धवः खानिताः। सागरस्य सलिलं किल क्षारम् (किन्तु) ते नियतम् अभिनवम् अमृतम् इव मन्त्रिते तत्र-तत्र वितरन्ति।।३४।।

अर्थ–हे सति! भारतवसुन्धरे! पूर्वोक्त मुनियों ने तुम्हारे वक्षःस्थल (भारतभूभाग) पर षड्दर्शनरूपी छः समुद्र खने (खोदे) थे, ज़ो, (परस्पर एक-दूसरे के पूरक होने के कारण) बन्धुओं के समान सम्मानित थे। समुद्र

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

का जल तो क्षार (खारा) है, किन्तु उक्त कपिल आदि मुनिगण द्वारा रचित दर्शनसमुद्र निश्चित ही अभिनव अमृत के समान (अमरत्व प्रदान करने वाले) ज्ञान को आज भी मन्त्रों से पवित्र अनेक स्थलों पर वितरित कर रहे हैं।।३४।।

काव्यत्वविमर्श—पूर्वार्द्ध में षड्दर्शनों का सादृश्य षट्सिन्धुओं से वर्णित हैं, अतः उपमा अलङ्कार है। उत्तरार्ध में षड्दर्शनों में अमृत-वितरण सामर्थ्य वर्णित कर उनका षट्सिन्धुओं से आधिक्य अभिहित है, अतः व्यतिरेक अलङ्कार है।।३४।।

कालिदासकवित्वकौशलवर्णनम्—

> **स्मरनरपतिविद्रोहिणमिव कोकिलकैतवे**
> **युवतिगण्डपाटलरुचिपाटलपटलोत्सवे ।**
> **यो बबन्ध विन्ध्याटविदृढवल्लरिशृङ्खलै-**
> **र्दुष्यन्तमसंख्यलोलशाकुन्तलकुन्तलैः ।।३५।।**

अन्वयः— यः कोकिलकैतवे युवतिगण्डपाटलरुचिपाटलपटलोत्सवे स्मर-नरपतिविद्रोहिणम् इव दुष्यन्तं विन्ध्याटविदृढवल्लरिशृङ्खलैः असंख्यलोल-शाकुन्तलकुन्तलैः बबन्ध।।३५।।

कालिदास के कवित्वकौशल का वर्णन—

अर्थ—जिन्होंने (कविकुलगुरु कालिदास ने) कोकिलों के कैतव से युक्त (वस्तुतः कोकिलों के मधुर स्वरों से उद्दीप्त), युवतियों के गण्डस्थल के समान गुलाबी कान्तिवाले पाटल आदि वृक्षों के उत्सव के समय (कण्वाश्रम में शकुन्तला, प्रियंवदा एवं अनसूया द्वारा वृक्षसेचन के समय, जब कोकिलों की कूक से वातावरणं मदनोद्दीपक था) राजा दुष्यन्त को मानो कामदेवरूपी राजा का विद्रोही होने के कारण—शासन न मानने के कारण, विन्ध्याटवी की दृढ़लता से अभिन्न शृङ्खलारूपी असंख्य चञ्चल शकुन्तला के केशों से बाँध दिया था।३५।

काव्यत्वविमर्श—कालिदासकृत अभिज्ञानशाकुन्तल के पञ्चमाङ्क के कथानक में राजा दुष्यन्त का चरित्र सदाचारी, धार्मिक के रूप में वर्णित है। (द्रष्टव्य- भद्रे! प्रथितं दुष्यन्तस्य चरित्रम्, प्रजास्वपीदं न दृश्यते, एवं वशिनां हि परपरिग्रहसंश्लेषपराङ्मुखीप्रवृतिः इत्यदि) किन्तु प्रथमाङ्क के वर्णनानुसार दुष्यन्त देखने मात्र से शकुन्तला के प्रणय में आबद्ध हो गये थे- ऐसा क्यों

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

हुआ? इस प्रश्न के समाधान के लिये कवि ने यहाँ मनोहर उत्प्रेक्षा की है। तदनुसार-सदाचारी, धार्मिक होने के कारण दुष्यन्त स्वेच्छाचार प्रवर्तक राजा कामदेव के शासनको नहीं मानते थे, अतः उसकी आज्ञा से कालिदास ने विद्रोही दुष्यन्त को शकुन्तला की केशरूपिणी शृँखला से बाँध दिया। यहाँ व्यङ्ग्यतया प्रतीत होता है कि- दुष्यन्त शकुन्तला के प्रेमपाश में निबद्ध हो गये।

स्मर पर नरपति का आरोप होने से रूपक अलङ्कार है। कवि ने दुष्यन्त के बाँधे जाने के हुतुरूप में उन्हें स्मरनरपति के विद्रोही के रूप में सम्भावित किया है, अतः हेतूत्प्रेक्षा अलङ्कार है। विन्ध्याचल की दृढलता पर शृँखला का तथा शकुन्तला के केशों पर तादृश शृँखला का आरोप होने के कारण रूपकगर्भित रूपकालङ्कार है।

अग्रिम तीन श्लोक एकान्वायी है। इनमें कवि ने मेघदूत में वर्णित विरहीयक्ष के अलकापुरी में स्थित भवन-चत्वर आदि के साथ उसकी प्रिया के रूप का मनोहर चित्रण करने वाले कालिदास का स्मरण भारत वसुन्धरा को करा कर सान्त्वना दी है॥३५॥

(सन्दानितकम्)

गौरीपतिमौलिदीप्तचारुचन्द्ररेखया
विद्योतित इव विलसति मुखरित इव केकया।
घनतुषारधवलशैलकैलासशिरसि स्थिते
पाणिकमलदत्ततालकङ्कणघनझङ्कृते ॥३६॥

शार्दूलकृतमरकतरुचि राङ्कवमयसंस्तरे
नर्त्तनपरनीलकण्ठभवनोदरचत्वरे ।
अलकायां धूसरलसदलकां किल सुदतीं
विरहविधुरमधुराकृतिविधुवदनां युवतीम्॥३७॥

कनक-कल-कुचयुगेन कियदिव किल नम्रां
धातृसकलसृष्टेरपि यः ससर्ज कम्राम्।
यो ददर्श कालिदास उमया सह शङ्करं
तं विक्रमनृपतिसखं स्मरसि न कविभास्करम्॥३८॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अन्वयः—यः (कालिदासः) अलकायां गौरीपतिमौलिदीप्तचारुचन्द्ररेखया विद्योतिते इव, केकया मुखरिते इव, विलसति, घनतुषारधवलशैलकैलासशिरसि स्थिते, पाणिकमलदत्ततालकङ्कणघनझङ्कृते शार्दूलकृतमरकतरुचि, राङ्कवमय-संस्तरे, नर्तनपरनीलकण्ठभवनोदरचत्वरे—

धूसरलसदलकां सुदतीं विरहविधुरमधुराकृतिविधुवदनां कनककलकुचयुगेन कियत् किल नम्राम् इव धातृसकलसृष्टेः अपि कम्रां युवतीं ससर्ज।

यः कालिदासः उमया सह शङ्करं ददर्श, तं विक्रमनृपतिसखं कविभास्करं न स्मरसि?॥३६-३७-३८॥

अर्थ—अलकापुरी में, गौरीपति भगवान् शङ्कर के मस्तक पर प्रकाशित चन्द्रकला से विद्योतित से, मयूर-वाणी से मुखरित (शब्दायित) से, विलसित, सान्द्र-हिम से धवल कैलास पर्वत के शिखर पर स्थित, (यक्षप्रिया के) कमलरूपी हाँथों से दिये गये तालों के कारण कङ्गनों की झंकार से झंकृत, शार्दूल (सिंह) के चर्म के आस्तृत होने के कारण मरकतमणि के समान कान्ति वाले तथा रङ्कु (मृगविशेष) के चर्म के विस्तर (बिछौने) से शोभित, जिसमें नीलकण्ठ नृत्य कर रहा है, ऐसे भवन के मध्यस्थ आँगन में—

धूसर वर्ण के केशों से शोभित, सुन्दर दाँतों वाली, विरह से पीड़ित होने पर भी मनोहर आकृति वाली, चन्द्र के समान मुखवाली, स्वर्ण के समान सुन्दर गौरवर्ण के कुचयुगल (के भार) से कुछ नम्र तथा विधाता की समस्त (नायिकाओं)की सृष्टि में सबसे मनोहर युवती (यक्ष-कान्ता) को जिसने (अपने मेघदूत नामक क़ाव्य में) सृजित किया था, (उस महाकवि कालिदास का)—

तथा जिसने उमा के साथ साक्षात् भगवान् शङ्कर का दर्शन किया था, उस विक्रमराजा (महाराज विक्रमादित्य) के मित्र, कवियों में सूर्यस्वरूप कालिदास का स्मरण नहीं कर रही हो? (काकु से व्यञ्जित होता है कि ऐसे महान् कवि का स्मरण कर सान्त्वना प्राप्त करो)॥३६-३७-३८॥

काव्यत्वविमर्श—उक्त श्लोकों में वर्णित विशेषणों की सङ्गति के लिये मेघदूत की निम्नलिखित पादों का सन्दर्भ ग्रहण करना चाहिये-

तालैः शिञ्जावलयसुभगैः कान्तया नर्तितो मे।
यामध्यास्ते दिवसविगमे नीलकण्ठः सुहृद्वः॥ (मे.७७)

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

बाह्योद्यानस्थितहरशिरश्चद्रिकाधौतहर्म्या।। (मे.-७)
या तत्र स्याद्युवतिविषये सृष्टिराद्येव धातुः।। (मे.८०)

भवनोदरचत्वर के समस्त विशेषण उसके सुन्दर मनोहर स्वरूप को अभिव्यक्त करते हैं, अतः साभिप्राय हैं, फलतः परिकर–अलङ्कार है। एवमेव युवती के विशेषण भी उसके अप्रितम सौन्दर्य के साथ विरह–वैधुर्य को व्यक्त करने के अभिप्राय से निबद्ध किये गये हैं, अतः यहाँ भी परिकर अलङ्कार है। 'विद्योतिते इव' 'मुखरिते इव' इत्यादि कथनों में इवार्थ–सम्भावना प्रतीत होती है, अतः उत्प्रेक्षा अलङ्कार माना जा सकता है, किन्तु उक्त भवनचत्वर वास्तव में चन्द्ररेखा से विद्योतित है तथा केका से मुखरित है, अतः सम्भावना का औचित्य प्रतीत नहीं होता।

समुद्रगुप्तसामर्थ्यवर्णनम्–

यस्य नाम हृदयपटादद्यापि न लुप्तं
राजराजराजेश्वरमपि न समुद्रगुप्तम्।
अवगच्छसि तं न सम्यगासमुद्रधरणिं
यः शशास यश्चकार निगमं भवतरणिम्।।३९।।

अन्वयः– यस्य नाम अद्यापि हृदयपटात् न लुप्तं, यः आसमुद्रधरणिं शशास, यः निगमं भवतरणिं चकार, तं राजराजराजेश्वरं समुद्रगुप्तम् अपि सम्यक् न अवगच्छसि।।३९।।

समुद्रगुप्त के सामर्थ्य का वर्णन–

अर्थ–जिनका नाम (भारतवासियों) के हृदय-पट से आज भी लुप्त नहीं हुआ है (अर्थात् भारतवासी आज भी जिनका स्मरण सम्मान के साथ करते हैं), जिन्होंने समुद्रपर्यन्त भूमि पर शासन किया था तथा निगम (वेद-शास्त्रों) को भवसागर पार करने की नौका बनाया था। (अर्थात् वेदविहित कर्मों का अनुष्ठान करते हुए जिन्होंने पुरुषार्थचतुष्टय की सिद्धि की थी) उन राजराजराजेश्वर-राजाओं के राजाओं के राजाओं के भी ईश्वर अथवा राजराजकुबेर के भी ईश्वर (धनसम्पत्ति में उनसे भी श्रेष्ठ) सम्राट् समुद्रगुप्त को सम्यक्तया नहीं जान रही हो?।।३९।।

काव्यत्वविमर्श–निगम पर भवतरणि का आरोप होने से रूपक अलङ्कार है।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अश्वमेधचिह्नानि च यदुपलमयवाहा-
स्तपनतापसलिलतुहिनशीकरावगाहाः ।
दिशि दिशि सति! सन्ति सततमद्यापि च धरणि!
ज्वलदनलं जनयसि स्म तं किल त्वमरणिः ।।४०।।

(तपनतप्तसलिल–इति मूले पाठः तत्र 'तपनतापसलिल–इति पाठ उचितः। यथोक्तपाठे–तपनेन तप्ते सलिले तुहिनशीकरेषु च अवगाहनकर्त्तार इत्यर्थो भवति न तु तपनतापेऽपिं, अतः 'त्रिषु ग्रीष्मवर्षाशीततर्तुषु अक्षुण्णतया स्थिताः' इति विवक्षितोऽर्थः न प्रतीयते, तपनतापसलिल... इति पाठे तु प्रतीयत एव।)

अन्वयः–हे सति! अश्वमेधचिह्नानि तपनतापसलिलतुहिनशीकरावगाहाः यदुपलमयवाहाः च अद्यापि दिशि दिशि सततं सन्ति। हे धरणि! त्वं किल अरणिः तं ज्वलदनलं जनयसि स्म।।४०।।

अर्थ–हे सति! जिनके द्वारा अश्वमेघ यज्ञ के चिह्नस्वरूप (स्मृति-चिह्न के रूप में) बनवाये गये यूप आदि) एवं सूर्यताप, जल एवं शीतल शीकरों में अवगाहन करने वाले (ग्रीष्म-वर्षा एवं शीत को निरन्तर सहन करने वाले) पत्थरों के घोड़े आज भी चारों दिशाओं में खड़े हैं। हे धरणि! उन समुद्रगुप्तरूपी जलते हुए अनल (अग्नि) को अरणिस्वरूपिणी तुमने ही उत्पन्न किया था। (ऐसे वीर-धार्मिक पुत्र की जननी (वीरप्रसू) होने के कारण तुम्हारा सन्ताप करना उचित नहीं है)।।४०।।

काव्यत्वविमर्श–समुद्रगुप्त पर ज्वलदनल का तथा भारतवसुन्धरा पर अरणि का आरोप होने से रूपक-अलङ्कार है।।४०।।

हर्षवर्धनवीरतावर्णनम्–

(सन्दानितकम्)

वृत्तं किमु न जानासि न हर्षवर्द्धनस्य
यो रराज राजराजिशिरसि पदं निवेश्य।
सपरिच्छदशाणितास्त्रसैनिककृतरङ्गान्
कनकचर्मरत्नोज्ज्वलवेगदृप्ततुरगान् ।।४१।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

गर्वोद्धतपर्वतनिभगजान् शुभ्रपताकाः
दधतो गुरुनिविडकृष्णमेघानिव बलाकाः।
स्वर्णकलशहेमदण्डचीनांशुकपताकान्
शतशतरथयूथानपि घर्षितसघननाकान्।।४२।।

सारनाथमठसदनः सुगतार्पितमानसः
प्रतिहायनमेव देवि! बहिरगमयदेष सः।
श्रमणानपि विप्रैः सह कर्त्तुमिव स सवर्णान्
विकिरति स्म सारनाथभिक्षुसदसि सुवर्णान्।।४३।।

(सुवर्णान् सीनर्णी राजमुद्राः)

अन्वयः– हे देवि! यः राजराजिशिरसि पदं निवेश्य रराज, किमु (तस्य) हर्षवर्धनस्य वृत्तं न जानसि (इति) न, सुगतार्पितमानसः सारनाथमठसदनः एषः सः–

सपरिच्छदशाणितास्त्रसैनिककृतरङ्गान् कनकचर्मरत्नोज्ज्वलवेगदृप्ततुरगान्, बलाकाः दधतः गुरुनिविडकृष्णमेघान् इव शुभ्रपताकाः दधतः, गर्वोद्धत-पवर्तनिभगजान्, स्वर्णकलशहेमदण्डचीनांशुकपताकान् घर्षितसघननाकान् शतशतरथयूथान् अपि बहिः अगमयत्।

सः विप्रैः सह श्रमणान् अपि सवर्णान् कर्त्तुम् इव सारनाथभिक्षुसदसि सुवर्णान् विकिरति स्म।।४१-४३।।

हर्षवर्धन की वीरता का वर्णन–

अर्थ–हे देवि! जो राजाओं की श्रेणी के शिर पर पैर रख कर (समस्त राजाओं को अपने वश में करके) शोभित होते थे, ऐसे महाराज हर्षवर्धन के चरित्र को तुम नहीं जानती हो-ऐसा नहीं है, अर्थात् अवश्य जानती हो। भगवान् बुद्ध को अपना मन अर्पित करने वाले तथा सारनाथ के बौद्धमठ को सदन बनाने वाले वे महाराज हर्षवर्धन–

वर्म आदि से सुसज्जित, तीक्ष्ण–अस्त्रधारी सैनिकों द्वारा रण-रङ्ग में नचाये जाने वाले, स्वर्ण, चर्म तथ रत्नों से उज्ज्वल (अलङ्कृत), वेग से दृप्त घोड़ों को, बक-पङ्क्ति को धारण करने वाले घने काले मेघों के समान

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

शुभ्रपताकाओं को धारण करने वाले, गर्व से उद्धत, पर्वत के समान समुन्नत, हाँथियों को तथा स्वर्णकलश, स्वर्णदण्ड, चीनांशुक (रेशम) की पताकाओं वाले अत एव मेघ सहित आकाश को घर्षित करने वाले हजारों रथ-यूथों को, प्रतिवर्ष अपनी राजधानी के बाहर ले जाते थे। वे सम्भवतः ब्राह्मणों के साथ श्रमणों (बौद्धसन्यासियों) को भी सवर्ण (ब्राह्मण-सदृश) बनाने के लिये सारनाथ की भिक्षुओं की सभा में सुवर्ण (सुवर्ण की राजमुद्राओं) का वितरण (दान) करते थे।।४१-४३।।

काव्यत्वविमर्श—तुरगों, गजों एवं रथों के लिए प्रयुक्त विशेषण उनके सौन्दर्य, सामर्थ्य एवं भव्यता आदि को व्यक्त कर रहे हैं, अतः परिकर अलङ्कार है। तृतीय पद्य के उत्तरार्ध में भिक्षुसभा में सुवर्ण मुद्राओं के वितरण के हेतुरूप में विप्रों के साथ श्रमणों को भी सवर्ण बनाने की सम्भावना की गयी है, अतः उत्प्रेक्षा अलङ्कार है।।४१-४३।।

अक्षयवटनिकटे तटमुपगम्य त्रिवेण्या-
स्तव कपालमिव सविधे चपलकुन्तलवेण्याः।
विप्रेभ्यो विनिवेद्य स सर्वस्वं भूपतिः
धन्यः किल निःस्वोऽभवदमलीकृतपद्धतिः।।४४।।

अन्वयः—सः भूपतिः (हर्षवर्धनः) अक्षयवटनिकटे, चपलकुन्तलवेण्याः त्रिवेण्याः तव कपालम् इव तटम् उपगम्य (सर्वेषां) सविधे विप्रेभ्यः सर्वस्वं विनिवेद्य अमलीकृतदानपद्धतिः (सन्) निःस्वः किल धन्यः अभवत्।।४४।।

अर्थ—वे राजा (प्रयाग में) अक्षयवट के निकट चपल केशों की वेणी वाली त्रिवेणी के मानो तुम्हारे कपालस्वरूप तट पर जाकर, ब्राह्मणों को सर्वस्व (समस्त-धन) दान कर स्वयं निर्धन हो गये थे। दान-परम्परा को विमल (प्रशस्त) करने वाले वे राजा (हर्षवर्धन) निश्चित ही धन्य हैं।।४४।।

काव्यत्वविमर्श—त्रिवेणीतट की सम्भावना वसुन्धरा के कपालरूप में की गयी है, अतः उत्प्रेक्षा अलङ्कार है।।४४।।

मल्लारगभीररागसंवृतशशिमिहिरः
तस्य सदसि नभसि बाणभट्टकविमुदिरः।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अद्यापि च वर्षन्निव सुमधुरां रुचिरुचिरां
मोहयति स विश्वं किल कादम्बरीमदिराम्।।४५।।

अन्वयः—तस्य सदसि नभसि मल्लारगभीररागसंवृतशशिमिहिरः बाणभट्टकविमुदिरः (आसीत्)। सः अद्यापि सुमधुरां रुचिरुचिरां कादम्बरी-मदिरां वर्षन् इव विश्वं मोहयति किल॥४५॥

अर्थ—उनके सभारूपी आकाश में बाणभट्टकविरूपी मेघ थे, जो मल्लार आदि गभीर रागों का गान कर (श्रोताओं के मनरूपी) चन्द्र और सूर्य को संवृत (रसमग्न) कर देते थे। वे आज भी सुमधुर, रुचिरुचिर, कादम्बरी (कथा-काव्य) रूपी मदिरा का वर्षण सा करते हुए विश्व को मोहित कर रहे हैं॥४५॥

काव्यत्वविमर्श—सभा पर आकाश का, सभासदों पर शशिमिहिर का, कादम्बरी पर मदिरा का तथा बाणभट्ट पर मेघ का आरोप होने से साङ्गपरम्परित रूपक अलङ्कार है॥४५॥

नालन्दिकविश्वविश्वविद्यालयविहारान्
स्मारयामि सारस्वतमौक्तिकवरहारान्।
तत्र यत्र पठन्ति स्म विविधविषयविशेषान्
छात्रा इयुरोपिणोऽपि ससंयमनमशेषान्।।४६।।

अन्वयः—(हे देवि! त्वाम् सम्प्रति) सारस्वतमौक्तिकवरहारान् नालन्दिक-विश्वविश्वविद्यालयविहारान् स्मारयामि। तत्र यत्र इयुरोपिणः छात्राः अपि अशेषान् विविधविषयविशेषान् ससंयमनं पठन्ति स्म॥४६॥

अर्थ—हे देवि! अब मैं तुम्हें सरस्वती के श्रेष्ठ मुक्ताहारस्वरूप नालन्दा के सभी विश्वविद्यालयों एवं विहारों (बौद्धमठों) का स्मरण करा रहा हूँ, जहाँ यूरोपीय देशों के छात्र भी संयम के साथ, समस्त, विविध विषयों के वैशिष्ट्य का अध्ययन करते थे॥४६॥

काव्यत्वविमर्श—विश्वविद्यालय-विहारों पर सारस्वतमौक्तिकवरहार का आरोप होने से रूपक-अलङ्कार है॥४६॥

गौडदेशशासकपालवंशीयराजचरितवर्णनम्—

झटिति भीमझञ्झानिल इव निपत्य पालाः
गुप्तान्वयमच्छिन्दन् कुपिता इव कालाः।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मात्स्यान्वय इह बभूव गोपालप्रौढः
गुप्तमिव तमभिषिच्य च तृप्तः खलु गौडः।।४७।।

(झटिति भीमझञ्झानिल इह निपत्य वेगात्। गुप्तान्वयमुच्छिद्य स नाशं समरेऽगात्। इति मूले पाठः, स च विसङ्गतः। उत्तरार्द्धे च प्रौढाः, गौडाः इति बहुवचनान्तः पाठः, स च बभूवेति क्रियायामसङ्गतः, अत एक वचनं कृतम्।)

अन्वयः—भीमझञ्झानिलः इव कुपिताः कालाः इव पालाः झटिति निपत्य गुप्तान्वयम् अच्छिन्दन्, इह मत्स्यान्वये गोपालप्रौढः बभूव, गुप्तम् इव तम् अभिषिच्य गौडः खलु तृप्तः बभूव।।४७।।

गौड (बंग) देश के शासक पालवंशीय राजाओं के चरित का वर्णन—

अर्थ—यहाँ भयङ्कर झञ्झावात के समान वेग से आक्रमण कर यमराज के समान कुपित पाल वीरों ने युद्ध में गुप्तवंश को उच्छिन्न कर नष्ट कर दिया था। यहाँ मत्स्यवंश में गोपाल नामक परमवीर हुए थे, गौडदेश की प्रजा गुप्त के समान ही उन्हें राज्यशासक के रूप में अभिषिक्त कर सन्तुष्ट हुयी थी।।४७।।

काव्यत्वविमर्श—मूल पद्य के पूर्वार्द्ध का वाक्यार्थ स्पष्ट नहीं हैं। यदि 'झञ्झानिलः इह गुप्तान्वयमुच्छिद्य समरे नाशम् अगात्' ऐसा अन्वय किया जाय तो झञ्झानिल गुप्तवंश के उच्छेदन का कर्त्ता होगा जो कि सम्भव नहीं है, क्योंकि गुप्तवंश का उच्छेदन किसी झञ्झानिल ने नहीं किया था। यदि इह के स्थान 'इव' पाठान्तर मान लिया जाय तो झञ्झानिल उपमान हो जायेगा। तदनुसार गुप्तवंशोच्छेदक यथार्थ उपमेय—पालों का पाठान्तर करके वाक्यार्थ किया गया है। एवमेव 'झटिति एवं वेगात्' की पुनरुक्ति से बचने के लिये तथा 'स नाशं समरेऽगात्' कथन से यह प्रतीत हो रहा है कि गुप्तान्वय का उच्छेदक ही समर में नष्ट हो गया। इन सब विसंगतियों को दूर करने के लिये पूर्वार्ध में पाठान्तर किया गया है।

गौड (बंग) देश में पालवंश के शासन को स्थपित करने वाले शासक का नाम गोपाल था। लगभग ७५०ई. से ११६१ ई. तक बंगदेश पर शासन करने वाले इस वंश में धर्मपाल, देवपाल, महीपाल आदि अनेक प्रतापी, धार्मिक, विद्वत्प्रिय राजा हुये थे।।४७।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

करयुगधृततीक्ष्णबाणशाणितकरवाला:
कति दिनानि भुञ्जते स्म वसुधां किल पाला:।
क्षेमीश्वरकविरभवन्महीपालसदस:
चण्डकौशिकमसृजत् स निःसृतमिव मनसः।।४८।।

अन्वयः—करयुगधृततीक्ष्णबाणशाणितकरवाला: पाला: कति दिनानि वसुधां भुञ्जते स्म। महीपालसदस: क्षेमीश्वर:कवि: अभवत्, स: मनस: नि:सृतम् इव चण्डकौशिकम् (एतन्नामनाटकम्) असृजत्।।४८।।

अर्थ—हाँथों में तीक्ष्ण बाण एवं शाणित (तीक्ष्णीकृत) तलवारों को धारण करने वाले पालवंशीय राजाओं ने बहुत दिनों तक पृथ्वी का भोग किया था। (इस वंश के) महीपालनामक राजा की सभा में क्षेमीश्वर नामक कवि (सम्मानित) होते थे, उन्होंने चण्डकौशिक नामक रूपक की रचना की थी, जो मानो उनके हृदय से ही निकला था।।४८।।

काव्यत्वविमर्श—'चण्डकौशिक' नाटक की क्षेमीश्वर कवि के मन से निकलने की सम्भावना की गयी है, अत: उत्प्रेक्षा अलङ्कार है।।४८।।

काश्यामपि महीपालकीर्त्तयः किल बहवः
न ययुः खलु तासु गर्गयवनोद्धतबाहवः।
परिमलस्य पण्यवीथिमासाद्य च ते बला-
दाकर्ण्य तु महीपालनाम भीतिविह्वलाः।।४९।।

अन्वयः—काश्याम् अपि महीपालकीर्तय: किल (विख्याता: सन्ति) बहव: गर्गयवनोद्धतबाहव: तासु खलु न ययु:। ते बलात् परिमलस्य पण्यवीथिम् आसाद्य महीपालनाम आकर्ण्य भीतिविह्वला: (बभूवु:)।।४९।।

अर्थ—काशी में भी महीपाल की कीर्तियाँ विख्यात हैं, अनेक उद्धतबाहुओं वाले गर्ग-यवन आक्रान्ता भी उन कीर्तियों के निकट नहीं पहँच पाये (उन्हें नष्ट नहीं कर पाये)। वे यवन परिमल की पण्यवीथिका (इत्र आदि प्रसाधन सामग्री बिकने वाली गली, साम्प्रतिक विश्वनाथ गली) तक तो दु:साहस करके आये थे, किन्तु महीपाल के नाम को सुनकर भय से विह्वल हो गये थे (डर कर भाग गये थे)।।४९।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

काव्यत्वविमर्श—काशी की परिमलपण्यवीथि को आज की विश्वनाथगली मान कर अर्थ किया गया है। यह कवि की अपनी कल्पना है कि- यवन उक्त वीथि तक चढ आये थे, इतिहास में उक्त नाम का उल्लेख नहीं प्राप्त होता।।४९।।

क्षणमपि नहि तस्थुरत्र देशं प्रति प्रस्थिता
जीवति सति तस्मिन् पुनराययुर्न विस्मिताः।
दक्षिणदिशि कृष्णोऽभूदमितबाहुविक्रमः
परनरपितहृदये स च जनितभीतिविभ्रमः।।५०।।

अन्वयः—ते अत्र क्षणम् अपि न तस्थुः, (स्वं) देशं प्रति प्रस्थिताः, (तस्मिन् महीपाले) जीवति सति विस्मिताः पुनः न आययुः। दक्षिणदिशि अमितबाहुविक्रमः कृष्णः (एतन्नामराजा) अभूत्, स च परनपतिहृदये जनितभीतिविभ्रमः (आसीत्)।।५०।।

अर्थ— वे यहाँ (काशी में) क्षणभर भी नहीं ठहरे, तत्काल अपने देश की ओर प्रस्थित हो गये। महीपाल के जीवित रहने तक उसके भय से पुनः कभी नहीं लौटे। दक्षिण दिशा में अतुल-भुज-पराक्रमशाली कृष्ण नामक राजा हुए। वे शत्रु राजाओं के हृदय में भय उत्पन्न करने वाले थे।।५०।।

काव्यत्वविमर्श—आन्ध्रप्रदेश के राष्ट्रकूटवंशीय शासक कृष्ण (प्रथम) परमधार्मिक, पराक्रमी एवं विद्वप्रिय राजा थे, इनका राज्यारोहण काल ७५८ई. है।।५०।।

भोजराजौजोवर्णनम्—

मञ्जोः परमभवद् भुवि नरपतिरिह भोजः
शस्त्रेषु च शास्त्रेषु च यस्य तुल्यमोजः।
पातञ्जलसूत्राणामकरोत् स च वृत्तिं
स च चकार चरकस्य तु कामपि परिवृत्तिम्।।५१।।

(मूले विशिखेषु इति पाठः, तस्य स्थाने 'शस्त्रेषु' इति पाठः समीचीनः छन्दोभङ्गोऽपि न।)

अन्वयः—भुवि इह (मालवेषु धारानगर्य्याम्) मञ्जोः (मुञ्जात्) परं भोजः नरपतिः अभवत्, यस्य ओजः शस्त्रेषु च शास्त्रेषु च तुल्यम् (आसीत्)। स च

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पातञ्जलसूत्राणां वृत्तिम् अकरोत्, स च चरकस्य तु काम् अपि परिवृत्तिं चकार।।५१।।

भोजराज के ओज का वर्णन–

अर्थ–यहाँ भारतभूमि में (मालव प्रदेश की धारा नगरी में) मञ्जु (इतिहास में उपलब्ध नाम मुञ्ज) के बाद भोज नामक नरपति हुए, जिनका ओज (प्रताप, वर्चस्व) शस्त्रों तथा शास्त्रों में समान रूप से था (वे शस्त्रविद्या तथा शास्त्रविद्या दोनों में समानरूप से पारङ्गत थे।) उन्होंने पातञ्जलसूत्रों (पातञ्जल-योग-सूत्र नामक ग्रन्थ) की वृत्ति (भोजवृत्ति) लिखी थी, तथा महर्षि चरक (महर्षिचरक-प्रणीत चरकसंहिता नामक आयुर्वेद-ग्रन्थ) की भी कोई अपूर्व परिवृत्ति (परिवर्तन, टीका संशोधन, परिवर्धन आदि) की थी।।५१।।

काव्यत्वविमर्श–मूल में मञ्जु (मञ्जोः) पाठ है, इतिहास प्रसिद्ध नाम 'मुञ्ज' हैं, जो भोज के पितृव्य थे। द्वितीयपाद में 'विशिखेषु' के स्थान पर 'शस्त्रेषु' पाठ अधिक उचित है। राजा भोज ने पातञ्जलयोगसूत्र पर किये गये व्यास-भाष्य के आधार पर भोजवृत्ति नामक टीका का प्रणयन किया है। चरकसंहिता पर इनके द्वारा किये गये कार्य को कवि ने 'कामपि परिवृत्तिम्' कहकर संकेतित किया है, तदनुसार ही अर्थ किया गया है।।५१।।

शास्त्रपुस्तकानामपि स च चकार सूची-
ररिनरपतिहृदयं स प्राविशदिव सूचिः।
राज्ये खलु तस्य किमपि कस्यापि न दैत्यं
नासीत् सति तदपि दूरीकृतमथ्नत्सैन्यम्।।५२।।

अन्वयः–हे सति! सः च शास्त्रपुस्तकानां सूचीः अपि चकार, सः अरिनरपतिहृदयं सूचिः इव प्राविशत्। तस्य राज्ये कस्य अपि किम् अपि दैन्यं न, तत् दूरीकृतमथ्नत्सैन्यम् अपि न आसीत्।।५२।।

अर्थ–उन्होंने (राजा भोज ने) शास्त्रीय पुस्तकों (विविध शास्त्रीय ग्रन्थों) की सूचियाँ भी बनायीं थीं और शत्रुराजाओं के हृदय में सूचि (सुई) के समान प्रवेश भी किया था (प्रतापी होने के कारण शत्रु राजाओं के हृदय में वे सुई के समान चुभते थे)। हे सति! उनके राज्य में किसी भी जन को कोई दैन्य

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

नहीं था, फिर भी वे शत्रुओं का मन्थन करने वाली अपनी सेना को दूर नहीं रखते थे॥५२॥

विमर्श- (प्रस्तुत पद्य में वाक्यार्थ पूर्णतः संगत नहीं हो पा रहा है। 'दूरीकृतमथ्नत्सैन्यम्' पद नपुंसक लिङ्ग एकव चन होने के कारण 'दैन्यम्' का विशेषण हो सकता है किन्तु वैसा मानने पर अर्थसंगति नहीं होगी, फलतः उसे राजा का विशेषण मानकर यथाकथञ्चित अर्थ की संगति बैठायी गयी है। सम्भवतः अन्त्यानुप्रास के बन्धन से कवि ने नपुंसक-प्रयोग कर दिया है। सूची पद का भिन्न अर्थों में दो बार प्रयोग होने से यमक अलङ्कार है। भोज की उपमा सूचि से दी गयी है, अतः उपमा अलङ्कार है॥५२॥

दानधर्मपरायणमहापुरुषवर्णनम्–

दानोज्ज्वलदनलदग्धविमलसुवर्णवर्णान्
ऋषिदधीचिनृपशिविरघुहरिश्चन्द्रकर्णान्।
स्वास्थिमांसधनधरणीपुत्रपललदातॄन्
तांस्तान् किमु न स्मरसि हि निखिलधर्मधातॄन्।।५३।।

अन्वयः–हे देवि! दानोज्ज्वलदनलदधविमलसुवर्णवर्णान्, ऋषिदधीचिनृपशिविरघुहरिश्चन्द्रकर्णान्,स्वास्थिमांसधनधरणीपुत्रपललदातॄन् तान् तान् निखिलधर्मधातॄन् हि किमु न स्मरसि॥५३॥

दानधर्मपरायण महापुरुषों का वर्णन–

अर्थ–हे देवि! निरन्तर दानरूपी उज्ज्वल अग्नि में तपाये जाने से दग्धमल अत एव विमल स्वर्ण के समान वर्ण वाले (सर्वथा निष्कलुष चरित्र वाले), अपनी अस्थियों, मांस, धन, पृथिवी, पुत्र एवं पलल (मांस-संसक्त-कवच) का दान करने वाले, क्रमशः ऋषि-दधीचि, राजा-शिवि, राजा-रघु, राजा-हरिश्चन्द्र एवं कर्ण आदि, सम्पूर्ण धर्मों को धारण करने वाले उन सभी महापुरुषों का स्मरण क्यों नहीं कर रही हो? (ये सर्वस्व दान करने वाले महापुरुष तुम्हारे ही पुत्र थे। उनकी दानधर्मिता का स्मरण कर शान्ति धारण करो)॥५३॥

काव्यत्वविमर्श–दधीचि-शिवि-रघु-हरिश्चन्द्र-कर्ण इन पाँच कर्तृभूत

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पदार्थों का क्रम से अस्थि–मांस–धन–धरणीपुत्र–पलल इन पाँच कर्णभूत पदार्थों से दातृत्वेन सम्बन्ध है, अतः यथासंख्य अलङ्कार है॥५३॥

कुम्भयोनिरम्भोनिधिमम्बुकणवदापिबन् -
नहुषं विषधरवपुषं तन्वंस्तमपातयत्।
गर्वान्धिमबन्ध्यविन्ध्यमूद्ध्र्वं द्रुतवर्द्धितं
कुण्ठितबललुण्ठिततनुमकरोदपि पातितम्।।५४।।

(मूले 'विन्ध्यमूर्द्ध्वद्रुतवर्द्धितम्' इति पाठः। तदपेक्षया 'ऊद्ध्र्वं द्रुतवर्धितम् इति समीचीनम्।)

अन्वयः—कुम्भयोनिः अम्भोनिधिम् अम्बुकणवत् आपिबत्। नहुषं विषधरवपुषं तन्वन् तम् अपातयत्, गर्वान्धिम् ऊद्ध्र्वं द्रुतवर्धितम् अवन्ध्यविन्ध्यं कुण्ठित-बललुण्ठिततनुं पातितम् अपि अकरोत्॥५४॥

अर्थ—कुम्भयोनि ने (घट से उत्पन्न होने वाले अगस्त–ऋषि ने) समुद्र को जलकण के समान (अनायास ही) पी लिया था। नहुष राजा को विषधर (अजगर–सर्प) के शरीर को धारण करने वाला बना कर, उसे (स्वर्ग से नीचे) पटक दिया था। उन्होंने गर्व से अन्धे (विवेकहीन), शीघ्रता से ऊपर की ओर बढ़ने वाले, अवन्ध्य (कभी किसी से पराजित न होने वाले) विन्ध्यपर्वत को निपातित कर कुण्ठित (व्यर्थ) बलवाला तथा लुण्ठितशरीर वाला (भूतल पर लेटा हुआ) बना दिया था॥५४॥

काव्यत्वविमर्श—अम्बुधि का सादृश्य अम्बुकण से वर्णित है, अतः उपमा-अलङ्कार है। मूल प्रति में 'अबन्ध्यविन्ध्यमूद्ध्र्वद्रुतवर्द्धितम्' पाठ है। इसकी अपेक्षा 'ऊद्ध्र्वं द्रुतवर्द्धितम्' ऐसा पाठ अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है। ऊद्ध्र्व–शब्द समस्त पद से पृथक् होकर स्पष्टतया विवक्षितार्थ को प्रतीत करा रहा है॥५४॥

भगवद्बुद्धचरितवर्णनम्—

उदजनि भुवि शौद्धौदनिरिह सुरकुलवन्दितः
विस्मरसि नु तमपि जननि यस्त्रिभुवनपूजितः?
त्यक्तदारपुत्रराज्यधनजितान्तरारातिः
यस्य सुमतमर्म धरणिरद्यापि च दधाति।।५५।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अन्वयः—सुरकुलवन्दितः शौद्धौदनिः इह भुवि उदजनि। जननि! यः त्रिभुवनपूजितः तम् अपि नु विस्मरसि? (यः) त्यक्तदारपुत्रराज्यधनजितान्तरारातिः (आसीत्) अद्यापि धरणिः यस्य सुमतमर्म दधाति।।५५।।

भगवान् बुद्ध के चरित का वर्णन—

अर्थ—सुरकुलों (देवगणों) द्वारा वन्दित, महाराज शुद्धोदन के पुत्र (भगवान् बुद्ध) इसी भूमि पर उदित (अवतरित) हुए थे, हे जननि! तुम उन्हें भी भूल रही हो जो त्रिभुवन के पूजित थे? जिन्होंने पत्नी, पुत्र, राज्य एवं धन का त्याग कर दिया था तथा अन्तःशत्रुओं (काम-क्रोध-द्वेषादिकों) को जीत लिया था। जिनके सुमत-मर्म (सर्वकल्याणकारी बौद्धधर्म के सिद्धान्त) को पृथ्वी आज भी धारण कर रही है।। (आज भी भूमण्डल के अनेक देशों में बौद्धधर्म अङ्गीकृत है)।।५५।।

काव्यत्वविमर्श—शौद्धोदनि के समस्त विशेषण साभिप्राय हैं, अतः परिकर अलङ्कार है।।५५।।

चन्द्रगुप्तप्रतापचाणक्यवैदुष्यवर्णनम्—

कुपितकुटिलबुद्धिकुशलकौटिल्यसहायकः
मगधराजचन्द्रगुप्त इभसहस्रनायकः।
विश्वविजयियवनराजसेकेन्द्रमपाकरोत्
दिशि दिशि स च शुभ्रकीर्त्तिपटलध्वजमातनोत्।।५६।।

(सेकेन्द्रः–सिकन्दरः।)

अन्वयः—कुपितकुटिलबुद्धिकुशलकौटिल्यसहायकः इभसहस्रनायकः मगधराजचन्द्रगुप्तः विश्वविजयिसेकेन्द्रम् अपाकरोत्। दिशि दिशि च सः शुभ्रकीर्तिध्वजपटलम् आतनोत्।।५६।।

चन्द्रगुप्त के प्रताप एवं चाणक्य के वैदुष्य का वर्णन—

अर्थ—क्रोधी, कुटिल तथा कुशल बुद्धि वाले कौटिल्य (चाणक्य) जिनके सहायक थे, जो हजारों हाँथियों के नायक थे, ऐसे मगधराज चन्द्रगुप्त ने विश्वविजयी, यवनराज, सेकेन्द्र (सिकन्दर) को हरा कर भगा दिया था तथा उन्होंने चारों दिशाओं में शुभ्रकीर्ति-पटलस्वरूप ध्वजाओं को भी फहराया था।।५६।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

काव्यत्वविमर्श–चन्द्र गुप्त के विशेषण साभिप्राय हैं, अतः परिकर अलङ्कार है॥५६॥

समुच्छिद्य नन्दान् नव न जग्राह राज्यं
शुनो लोलरसनलीढमिव न याज्यमाज्यम्।
तत्र मौर्यचन्द्रगुप्तमभिषिच्य तमवामः
सचिवपदे राक्षसमपि स हि गहनं जगाम॥५७॥

अन्वयः–(यः कौटिल्यः) नव नन्दान् समुच्छिद्य शुनः रसनलीढं याज्यम् आज्यम् इव राज्यं न जग्राह। स हि अवामः (सन्) तत्र तं मौर्यचन्द्रगुप्तं, सचिवपदे राक्षसम् अपि अभिषिच्य गहनं जगाम॥५७॥

अर्थ– जिन कौटिल्य ने नौ नन्दों (नन्दवंशीय–शासकों) का उच्छेदन (विनाश) कर राज्य को वैसे ही ग्रहण नहीं किया था (त्याग दिया था) जैसे कुत्ते की चञ्चल जीभ द्वारा चाटे गये (कुत्ते द्वारा उच्छिष्ट किये गये) यज्ञीय घृत को त्याग दिया जाता है। उसके अनुकूल (समर्थक) रहते हुए ही राज्यसिंहासन पर उस चन्द्रगुप्त–मौर्य को अभिषिक्त कर, तथा सचिव पद पर राक्षसनामक (नीतिवेत्ता) को प्रतिष्ठित कर वे (चाणक्य) स्वयं वन को चले गये थे॥५७॥

काव्यत्वविमर्श–राज्य की उपमा शुनोलीढयाज्याज्य से दी गयी है, अतः उपमा अलङ्कार है॥५७॥

कुरुक्षेत्रसमरे शरमदधान्न च मुरारिः
न धारयन् कमपि शरं स तु बभूव जितारिः।
कामशास्त्रमर्थशास्त्रमपि चकार सूक्ष्मधीः
न्यायभाष्यकमरोदपि शौर्यवीर्यवारिधिः॥५८॥

अन्वयः–(यथा) मुरारिः कुरुक्षेत्रसमरे शरं न च अधात्, सः तु कमपि शरं न धारयन् जितारिः बभूव (तथैव कौटिल्यः अपि विनैवास्त्रं बुद्धिबलेन विपक्षक्षयं विधाय जितारिः बभूव)। सूक्ष्मधीः (सः) कामशास्त्रम् अर्थशास्त्रम् अपि चकार, शौर्यवीर्यवारिधिः अपि न्यायशास्त्रम् अकरोत्॥५८॥

अर्थ– जैसे कुरुक्षेत्र के युद्ध (महाभारत–युद्ध) में मुरारि (भगवान् श्रीकृष्ण) ने शर (बाण-शस्त्र) धारण नहीं किया था। वे तो किसी भी शस्त्र

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

को धारण किये बिना ही शत्रुओं के विजेता बने थे। वैसे ही वे (चाणक्य) भी किसी भी शास्त्र को धारण किये विना शत्रु-विजेता बने थे। सूक्ष्मबुद्धि वाले उन्होंने कामशास्त्र एवं अर्थशास्त्र की भी रचना की थी तथा शौर्य-वीर्य के सागरस्वरूप होते हुए भी उन्होंने न्यायभाष्य किया था।।५८।।

काव्यत्वविमर्श—चाणक्य का सादृश्य श्रीकृष्ण से वर्णित है, अतः उपमा अलङ्कार है। शौर्य–वीर्य सम्पन्न व्यक्ति प्रायः सूक्ष्मशास्त्रवेत्ता नहीं होते किन्तु चाणक्य ने शौर्य–वीर्य सम्पन्न होते हुए सूक्ष्म–जटिल न्याय–सूत्रों का भाष्य किया, अतः विरोधाभास अलङ्कार माना जा सकता है। चाणक्य की विलक्षण गुणवत्ता की प्रतीति से विरोध का परिहार भी सम्भव है।।५८।।

मुरनपतिवर्णनम्—

हरिरभवन् मुरनरपतिपञ्चजननिहन्ता
तदपरमुरनिकारोऽभूत् सिन्धुपारगन्ता।
काले किल तेषामिह हिमभूधरशिरसि
केऽपि वसतिमवनीश्वरि विदधुः सति रहसि।।५९।।

अन्वयः—मुरनपतिपञ्चजननिहन्ता हरिः अभवत्, तदपरमुरनिकरः सिन्धुपारगन्ता अभूत्। हे अवनीश्वरि! काले किल इह तेषां केऽपि रहसि सति हिमभूधरशिरसि वसतिं विदधुः।।५९।।

मुरनपतियों का वर्णन—

अर्थ— मुरनामक राजा एवं उसके लोगों को (प्रजा को) मारने वाला हरिनामधारी राजा हुआ था (यहाँ मुरनामक दैत्य को मारने वाले हरि-विष्णु की भी व्यञ्जना हो रही है) उसके अनन्तर (उनसे भिन्न) सागर को पार करने वाले मुरवंशीय लोगों का समूह हुआ। हे अवनीश्वरि! कालान्तर में उनमें से कुछ लोगों ने हिमालय के शिखर पर (पर्वतीय राज्यों में) एकान्त में निवास किया था।।५९।।

तद्दुहितरमपजहार नन्दो नरदेवः
तदुदरभवमिममवेहि चन्द्रगुप्तमेव।
यूरोपनिवासिनोऽपि शुभ्रकीर्तिभाजनं
प्रशंसन्ति नित्यं किल यस्य राज्यपालनम्।।६०।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अन्वयः–नरदेवः नन्दः तद्दुहितरम् अपजहार, इमं चन्द्रगुप्तं तदुदरभवम् एव अवेहि। यस्य शुभ्रकीर्तिभाजनं राज्यपालनं किल यूरोपनिवासिनः अपि नित्यं प्रशंसन्ति।।६०।।

अर्थ– नन्दनामक (मगधदेश के) राजा ने उसकी (मुरवंश के राजा की) पुत्री का अपहरण किया था। इस चन्द्रगुप्त को उसके उदर से ही उत्पन्न जानो। जिसकी शुभ्रकीर्ति की पात्रभूता (यशस्करी) राज्यपालन-पद्धति की प्रशंसा यूरोप निवासी भी निरन्तर करते हैं।।६०।।

अशोकसत्कृत्यवर्णनम्–

तस्य चन्द्रगुप्तस्य च नन्दनस्य नन्दनः
यशसा किल चन्दनतरुरखिलभुवननन्दनः।
योऽन्धीकृतमिव नयनं लिखितलिपिभिरञ्जनैः
उदमीलयदिव नयनं नृणां जनरञ्जनैः।।६१।।

अन्वयः–तस्य चन्द्रगुप्तस्य च नन्दनस्य (बिन्दुसारस्य) नन्दनः (अशोकः) यशसा किल चन्दनतरुः, अखिलभुवननन्दनः (च आसीत्)। यः (जनरञ्जनैः) अञ्जनैः अन्धीकृतं नयनम् इव (जनरञ्जनाभिः) लिखितलिपिभिः, जनरञ्जनैः च नृणां नयनम् उदमीलयत् इव।।६१।।

अशोक के सत्कृत्यों का वर्णन–

अर्थ–उस चन्द्रगुप्त के पुत्र (बिन्दुसार) का पुत्र (अशोक) हुआ, जो यश से चन्दनवृक्षस्वरूप (निर्मल तथा सुवासित) एवं अखिल–भुवन (भारतभूमि) को नन्दित करने वाला था। उसने लिखितलिपियों (सम्पूर्ण भारत में लिखवाये गये विभिन्न शिलालेखों) के द्वारा तथा प्रजारञ्जन द्वारा (अज्ञान से) अन्धे (अज्ञानी) बना दिये गये लोगों के नयनों (ज्ञान-चक्षुओं) का वैसे ही उन्मीलन किया जैसे लोगों को रञ्जित करने वाले अञ्जन के द्वारा अन्धे नयन उन्मीलित किये जाते हैं।।६१।।

काव्यत्वविमर्श–यश पर चन्दनतरु का आरोप होने से रूपक अलङ्कार है। लिखितलिपि का सादृश्य अञ्जन से वर्णित है अतः उपमा। लिखितलिपि–विशेषण की लक्षणा तद्विशिष्ट–स्तम्भ–विशेष में करके वाक्यार्थ स्पष्ट किया गया है।।६१।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

व्यलसदनलसः ससूनुरयमशोकभूपः
दिशि दिशि किल यस्योज्ज्वलकीर्त्तिपटलधूपः।
पथि पथि खलु पथिकानां प्रीणनाय काननं
यस्यासीत् फलबहुलं शीतलजलभाजनम्।।६२।।

अन्वयः—यस्य उज्ज्वलकीर्तिपटलधूपः दिशि दिशि (वितस्तार) अनलसः अयम् अशोकभूपः ससूनुः व्यलसत्। यस्य खलु पथिकानां प्रीणनाय पथि पथि फलबहुलं शीतलजलभाजनं काननम् आसीत्।।६२।।

अर्थ— जिनकी उज्ज्वल–कीर्ति–पटलरूपी धूप चारों दिशाओं को सुवासित करती थी, ऐसे आलस्य रहित (सदा स्वकर्त्तव्यलग्न) ये अशोकनामक राजा अपने पुत्रों (महेन्द्र आदि पाँच पुत्रों एवं संघमित्रा नामक पुत्री) के साथ शोभायमान हुए। जिन्होंने पथिकों को प्रसन्न करने के लिये (उनकी श्रान्ति, पिपासा एवं बुभुक्षा शान्त करने के लिये) राज्य के प्रत्येक मार्ग के दोनों ओर फलदार वृक्षों के वन लगवाये थे, तथा शीतलजल के जलाशय (कूप-सरोवर आदि) खनवाये थे।।६२।।

काव्यत्वविमर्श—उज्ज्वलकीर्तिपटल पर धूप का आरोप होने से रूपक अलङ्कार है।।६२।।

विविधविपुलबहुलपथिभिरसृजदिव पीनाः
सर्ववपुषि वसुधे तव नाडीर्नु नवीनाः।
सर्वत्र च ययुरथ रथनिवहाः खलु नियतं
सरिति सरिति तरयोऽपि च जलधिष्वपि सततम्।।६३।।

अन्वय—हे वसुधे! (सः अशोकः) विविधविपुलबहुलपथिभिः तव वपुषि नु पीनाः नवीनाः नाडी इव असृजत्। अथ (तेषु पथिषु) च सर्वत्र खलु रथनिवहाः नियतं ययुः, सरिति सरिति जलधिषु च तरयः अपि सततम् (ययुः))।।६३।।

अर्थ—हे वसुधे! उस अशोक ने नाना प्रकार के विस्तीर्ण, बहुत से मार्गों के निर्माण द्वारा मानो तुम्हारे सम्पूर्ण शरीर में मोटी, नवीन नाडियों का निर्माण कराया था। उन मार्गों पर रथों के समूह सर्वत्र अबाध गति से सञ्चरण करते थे, तथा प्रत्येक नदियों में एवं समुद्र में भी नावें निरन्तर आवागमन करतीं थीं।६३।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

काव्यत्वविमर्श—निर्मापित मार्गों में नवीन-नाडियों के निर्माण की सम्भावना होने से उत्प्रेक्षा अलङ्कार है॥६३॥

स्तूपकूपबहुविहारघटनमठघटाभिः
स्तम्भैः करिकुम्भपतितहरिभिरपि जटाभिः।
भूषितैश्च पालिलिपिभिरपि च कृतसमाजः
तव वपुरिदमावृणोत् स सकलनृपतिराजः॥६४॥

अन्वयः—कृतसमाजः सः सकलनृपतिराजः (अशोकः) स्तूपकूपबहुविहार-घटनमठघटाभिः, जटाभिः (भूषितैः) करिकुम्भपतितहरिभिः अपि, पालिलिपिभिः अपि भूषितैः स्तम्भैः च तव इदं वपुः अभूषयत्॥६४॥

व्याख्या— अपने प्रजारञ्जक कार्यों से समाज को अनुकूल बनाने वाले समस्त राजाओं को राजा उन अशोक ने अनेक स्तूपों, कूपों, विहारों एवं मठों के द्वारा (उनका निर्माण करा के) तथा हाँथियों के गण्डस्थल पर आक्रमण करते हुए सटाधारी सिहों (की मूर्तियों) से एवं पालिलिपि (में लिखित सन्देशों) से विभूषित स्तम्भों द्वारा तुम्हारे इस शरीर (भारतभूति) को आवृत (अलङ्कृत) किया था॥६४॥

गिरिषु गिरिषु गिरिदरीषु सकरुणा लिपिधाराः
स निचखान कनकरचितनिष्कैश्च विहाराः।
पूरितश्च तेन तेन योऽभवदथ निःस्वः
प्रियदर्शी देवानां प्रिय इह नृपतिः सः॥६५॥

(मूले 'विहाराः' इति पाठः, कर्मत्वात् द्वितीयाबहुवचनं 'विहारान्' इति भाव्यम्, तच्चान्त्यानुप्रासभङ्गभयान्न परिवर्त्तितम्, अर्थो यथोचित एव कृतः)

अन्वयः—सः गिरिषु गिरिषु गिरिदरीषु सकरुणाः लिपिधाराः, कनकरचितनिष्कैः च विहाराः (विहारान्) निचखान। अथ यः निस्वः अभवत्, तेन (सः) तेन (वस्तुना) पूरितश्च। इह सः नृपतिः प्रियदर्शी देवानांप्रियः (इति नामभ्यां प्रसिद्धो बभूव)॥६५॥

अर्थ— अशोक ने पर्वतों-पर्वतों पर तथा पर्वतों की कन्दराओं में करुणायुक्त (दया-दाक्षिण्य को प्रोत्साहित करने वाली) लिपि में (भाषा में)

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

शिलालेख लिखवाये, तथा स्वर्ण मुद्राओं का व्यय करके विहारों (बौद्धविहारों) का निर्माण भी कराया। उन्होंने जो निर्धन थे उन्हें अभिलषित पदार्थ देकर पूरित (सन्तुष्ट) किया, इसलिये वे राजा 'प्रियदर्शी' एवं 'देवानां प्रिय' इन दो सम्मानसूचक उपाधियों से जाने जाते थे।।६५।।

निजपरभुवमविचार्य च भेषजभिषगर्पणै-
रकरोत् किल नॄन् पशूंश्च नीरुजः समर्षणैः।
नन्दनमपि दुहितरमपि भिक्षुसदसि योऽददात्
प्रैषयत् स तौ पुनश्च सिंहलेषु भारतात्।।६६।।

अन्वयः–(सः) निजपरभुवम् अविचार्य च समर्षणैः भेषजभिषगर्पणैः किल नॄन् पशून् च नीरुजः अकरोत्। यः नन्दनम् अपि दुहितरम् अपि भिक्षुसदसि अददात्, पुनः च सः तौ भारतात् सिंहलेषु प्रैषयत्।।६६।।

अर्थ– उन्होंने अपनी-परायी भूमि (राज्य) का विचार किये बिना (भेद-भाव रहित होकर) औषधियों एवं सहनशील वैद्यों द्वारा मानवों एवं पशुओं को नीरोग किया था। अपने पुत्र (महेन्द्र) तथा पुत्री (संघमित्रा) को भिक्षुओं की सभा में (धर्म प्रचार के लिये) समर्पित कर दिया था, तथा उन दोनों को फिर भारत से सिंहलद्वीप भेज दिया था।।६६।।

सौगतमतमवलम्ब्य च वैदिकमतवादं
नाच्छिनत् स बाधते स्म यज्ञपशुनिषादम्।
ब्राह्मणेषु भक्तिरभवदमला न च लूना
न श्रमणात् तेषु तस्य सापि किञ्चिदूना।।६७।।

अन्वयः–सः च सौगतमतम् अवलम्ब्य (अपि) वैदिकमतवादं न अच्छिनत् (केवलम्) यज्ञपशुनिषादं बाधते स्म। ब्राह्मणेषु तस्य अमला भक्तिः अभवत्, न च लूना, तेषु सा श्रमणात् किञ्चित् (अपि) ऊना न (अभवत्)।।६७।।

अर्थ–सौगतमत (बौद्धधर्म) का अवलम्बन करके भी उन्होंने कभी भी वैदिक-मत का खण्डन (परित्याग) नहीं किया, वे केवल यज्ञों में पशुहिंसा का विरोध (निषेध) करते थे। ब्राह्मणों में उनकी भक्ति अमल (छलरहित) थी– छिन्न नहीं हुयी थी, तथा श्रमणों की अपेक्षा ब्राह्मणों में उनकी भक्ति किञ्चित् भी कम नहीं थी।।६७।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

विस्मरसि नु राजराजेश्वरमशोकं
यश्चकार पृथिवीमपि देवि देवलोकम्।
विस्मरसि नु पुष्यमित्रमजयद् यो मिलिन्द-
मश्वमेधयाजिनमपि वशीभूतपुलिन्दम्।।६८।।

अन्वयः—हे देवि! त्वं तु राजराजेश्वरम् अशोकं विस्मरसि, यः पृथिवीम् अपि देवलोकं चकार।

यः मिलिन्दरम् अजयत् (तम्) अश्वमेघयाजिनं वशीभूतपुलिन्दं पुष्यमित्रम् अपि विस्मरसि नु॥६८॥

अर्थ— हे देवि! तुम (उक्त महनीय गुणों से युक्त) राजराजेश्वर अशोक का विस्मरण कर रही हो? जिन्होंने पृथ्वी को भी देवलोक बना दिया था।

जिन्होंने मिलिन्दनामक राजा को जीता था, उन अश्वमेघ यज्ञ करने वाले तथा पुलिन्द (नामक राजा) को अपने वश में (अधीन) करने वाले, पुष्यमित्र (शुंग) का भी विस्मरण कर रही हो? (उक्त धार्मिक, प्रजापालक एवं शौर्य-वीर्य सम्पन्न राजाओं का स्मरण कर धैर्य धारण करो)॥६८॥

विक्रमादित्यकीर्तिवर्णनम्—

सरसीजलराशय इव धरणीधृतमालवा
उज्जयिनी कमलिनीव तन्त्रस्मितमानवा।
तत्र गार्द्दभीनिपीनवंशाम्बुधिचन्द्रमाः
स विक्रमादित्यनृपतिरनुजगाम यं रमा।।६९।।

अन्वयः—सरसीजलराशयः इव धरणीधृतमालवा (तत्र) कमलिनी इव तन्त्रस्मितमानवा उज्जयिनी (नगरी अस्ति)। तत्र गर्द्दभीनिपीनवंशाम्बुधिचन्द्रमाः सः विक्रमादित्यनृपतिः (बभूव), यं रमा अपि अनुजगाम॥६९॥

अर्थ— सरसी के द्वारा धारित जलराशि के समान धरणी के द्वारा धारित मालवदेश है, उसमें (खिली हुयी) कमलिनी के समान सुशासन से प्रसन्न मानवों वाली, उज्जयिनी नगरी विराजित है। उस नगरी में गर्दभी के महान् वंशरूपी समुद्र के चन्द्रस्वरूप विक्रमादित्य राजा हुए थे, जिनका अनुगमन रमा (लक्ष्मी) भी करती थी॥६९॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

काव्यत्वविमर्श–सरसीघृतजलराशि की उपमा मालवभूमि से एवं उज्जयिनी की उपमा कमलिनी से दी गयी है, अतः उपमा अलङ्कार हैं। वंश पर अम्बुधि का आरोप तथा विक्रमादित्य पर चन्द्रमा का आरोप है, अतः रूपक अलङ्कार है।।६९।।

(युग्मकम्)

इन्द्रजालविद्यागुरुभोजराजकन्यका
कानकीव विद्युद्द्युतिरुद्यच्छवितारका।
भानुमत्युदारनाम या दधार च यस्याः
गौरे गुरुकरभोरौ तिलचिह्नमिव मस्याः।।७०।।

सा बभूव महिषी किल विदुषी वरनारी
यां विलोक्य मुह्यति स्म मुनिरपि वनचारी।
स च तयैव हिमगिरिरिव निर्झरजलधारया
विश्वेश्वरभूमिभा इव रराज गङ्गया।।७१।।

अन्वयः–कानकीविद्युद्द्युतिः इव, उद्यच्छवितारका, इन्द्रजालविद्यागुरुभोजराजकन्यका (आसीत्), या भानुमती इति उदारनाम दधार, यस्याः गौरे गुरुकरभोरौ मस्याः इव तिलचिह्नम् (आसीत्), सा विदुषी वरनारी (तस्य विक्रमादित्यस्य) किल महिषी बभूव, यां विलोक्य वनचारी मुनिः अपि मुह्यति स्म। स च निर्झरजलधारया हिमगिरिः इव गङ्गया विश्वेश्वरभूमिभाः इव तया एव रराज।।७०-७१।।

अर्थ– स्वर्ण-विद्युत् की कान्ति के समान कान्तिवाली, उदीयमान द्युतियुक्त तारकों वाली, इन्द्रजाल विद्या के पण्डित भोजराज की एक पुत्री थी, जो 'भानुमती' इस उदार नाम को धारण करती थी (जिसका नाम भानुमती था) तथा जिसके गौरवर्ण के करभसदृश ऊरु पर मसी–सदृश (स्याही के समान काला) तिल का चिह्न था, ऐसी विदुषी, श्रेष्ठनारी उन (विक्रमादित्य) की महारानी थी। जिसे देखकर वनचारी (तपोवन निवासी) मुनि भी मोहित हो जाते थे। वे राजा उससे वैसे ही शोभित होते थे, जैसे निर्झर जलधारा से हिमालय एवं गङ्गा से विश्वेश्वर शिव का निवासभूत भूमिभाग (हिमालय–पर्वत) शोभित होता है।।७०-७१।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

काव्यत्वविमर्श–प्रथमपद्य में भोजराज की कन्या की उपमा कानकी विद्युतद्युति से एवं तिल चिह्न की मसी से दी गयी है, अतः उपमा अलङ्कार है। द्वितीय पद्य में भानुमती से शोभित विक्रमादित्य की उपमा जलधारा से शोभित हिमालय से तथा गङ्गा से शोभित विश्वेश्वर भूमि से दी गयी है, अतः एकाधिक उपमान होने के कारण मालोपमा अलङ्कार है।।७०-७१।।

विविधदिग्भ्य इह विबुधान् नव, नव-नवयत्नैः
आनीय विनिर्मितेव परिषन्नवरत्नैः।
द्वात्रिंशत् पुत्तलधृतसिंहासनशिरसि
तत्र राजराजः खलु विरराज स सदसि।।७२।।

(मूले 'विनिर्मितैव' इति पाठः। एवकारेण न कोऽप्यर्थविशेषलाभः, इवेन उत्प्रेक्षावाचकेन विबुधा नवरत्नत्वेन सम्भाव्यन्तेऽतोऽस्यौचित्यम्।)

अन्वयः–(तेन) नव नव यत्नैः विविधदिग्भ्यः नव विबुधान् आनीय नवरत्नैः इव परिषत् विनिर्मिता। सः राजराजः खलु तत्र सदसि द्वात्रिंशत्पुत्तलधृत-सिंहासनशिरसि विरराज।।७२।।

अर्थ– उन्होंने नये–नये प्रयत्नों द्वारा विविध दिशाओं से नौ विद्वानों को लाकर, मानो नौरत्नों द्वारा अपनी परिषद् (विद्वत्सभा) बनायी थी। राजाओं के राजा वे विक्रमादित्य सभा में बत्तीस पुतलियों द्वारा धारण की गयी सिंहासन पर विराजमान होते थे।।७२।।

काव्यत्वविमर्श–नवशब्द का भिन्न-भिन्न अर्थों में दो बार प्रयोग होने से यमक-अलङ्कार है। नौ-विद्वानों में नौ-रत्नों की सम्भावना की गयी है, अतः उत्प्रेक्षा अलङ्कार है। राजा विक्रमादित्य की सभा के कालिदास आदि नवरत्न प्रसिद्ध हैं। 'सिंहासनवत्तीसी' आदि ग्रन्थों में उनकी सिंहासन के बत्तीस पुतलियों द्वारा धारण करने का आख्यान भी प्रसिद्ध है।।७२।।

यस्य महाकाले किल भगवति गिरिजापता-
वासीद् भवभाविनीव भक्तिर्विधिसम्मता।
बेतालसहायकः स जिगाय खलु सर्वं
स कदापि च भेजे तु न कमपि मनसि गर्वम्।।७३।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अन्वयः—यस्य महाकाले भगवति गिरिजापतौ किल भवभाविनी इव विधिसम्मता भक्तिः आसीत्। वेतालसहायकः सः खलु सर्वं जिगाय, तु स च कदापि कमपि गर्वं मनसि न भेजे।।७३।।

अर्थ— जिनकी महाकाल भगवान् गिरिजापति (शंकर जी) में भवभाविनी सी भक्ति थी। बेताल की सहायता से उन्होंने सब को जीत लिया था, किन्तु मन में कभी भी किसी प्रकार का गर्व धारण नहीं किया।।७३।।

काव्यत्वविमर्श—विक्रम-वेताल के अनेक आख्यान "वेतालपञ्चविंशतिका' आदि ग्रन्थों में वर्णित हैं।

समुच्छिद्य शकनृपतीन् कथितो भुवि शकारिः
विजहार स धरणि! गिरिषु जलधिजलविहारी।
कोऽपि कोऽपि नरपतिरिह विश्रुतंगुणधामा
तन्नामोपाधिमभजदहह तीक्ष्णधामा।।७४।।

अन्वयः—(सः) शकनृपतीन् समुच्छिद्य भुवि 'शकारिःकथितः। हे धरणि! जलधिजलविहारी सः गिरिषु विजहार। अहह! इह विश्रुतगुणधामा तीक्ष्ण-धामा कोऽपि कोऽपि नरपतिः तन्नामोपाधिम् अभजत्।।७४।।

अर्थ— शकनामक आक्रान्ताओं को जीत कर वे पृथ्वी पर 'शकारि' नाम से विख्यात हुए थे। हे धरणि! जलधि के जल में विहार करने वाले वे पर्वतों पर भी विहार करते थे। अहह! विख्यात गुणों के आश्रय (श्रेष्ठ-गुणयुक्त) प्रखर-तेजस्वी किसी-किसी (परवर्ती) राजा ने उनके नाम को (विक्रमादित्यशब्द को) उपाधि के रूप में धारण किया था।।७४।।

यस्य च नवरत्नसदसि धरणि! कालिदासः
अमृतवर्षिकविकुलगुरुरतुलो विललास।
अद्यापि च तव वक्षसि यस्य वर्षगणना
प्रचलति सति! विस्मरसि नु तमपि नृपमिवोन्मनाः।।७५।।

अन्वयः—हे धरणि! यस्य नवरत्नसदसि च अमृतवर्षिकविकुलगुरुः अतुलः कालिदासः विललास। यस्य वर्षगणना च अद्यापि तव वक्षसि प्रचलिता (अस्ति) हे सति! तं नृपम् अपि उन्मनाः इव विस्मरसि नु?।।७५।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अर्थ– हे धरणि! जिनकी नवरत्नों की सभा में अमृत की वर्षा करने वाले, कविकुलगुरु, अतुलनीय कवि कालिदास विलसित होते थे। ज़िनके द्वारा प्रवर्तित वर्ष–गणना (विक्रम–संवत्सर) आज भी तुम्हारे वक्षःस्थल पर (भारत–भूमि में) प्रचलित है। हे सति! तुम उदासीन सी हो कर उस राजा (विक्रमादित्य) का भी विस्मरण कर रही हो?।।७५।।

विदुषि भक्तिरभवदस्य कविषु च रतिरमला
शास्त्रेषु च विशदबुद्धिररिषु च दृक् सबला।
बल्लालो नरपतिरपि यस्योज्ज्वलचरितं
विलखति स्म योऽवाहयदिह हि कीर्त्तिसरितम्।।७६।।

अन्वयः–अस्य विदुषि भक्तिः, कविषु च अमला रतिः शास्त्रेषु च विशदबुद्धिः, अरिषु च सबला दृक् अभवत्। यः हि इह कीर्तिसरितम् अवाहयत् (सः) बल्लालः नरपतिः अपि यस्य उज्ज्वलचरितं विलिखति स्म।।७६।।

अर्थ– इनकी विद्वानों में भक्ति-भावना थी, कवियों में विमल रति (प्रीति) थी, शास्त्रों में विशद (निर्मल) बुद्धि थी तथा शत्रुओं में सबल दृष्टि थी। जिन्होंने इस भूमि पर कीर्ति की सरिता बहायी थी, ऐसे उन बल्लालनामक राजा ने भी जिनके उज्ज्वल चरित्र को लिखा था।।७६।।

काव्यत्वविमर्श–दक्षिण भारत के ब्राह्मण कुलीन पालवंश के पश्चात् बंगाल में सेनवंश का शासन स्थापित हुआ। इसके प्रथम अधिष्ठाता सामन्त सेन का पुत्र बल्लाल सेन ११५८ ई. में उत्तराधिकारी बना। वह बड़ा प्रतापी, विद्वान् तथा विद्वत्प्रिय था।।७६।।

सेनवंशीयगौडदेशशासकचरितवर्णनम्–

भुजबलेन बल्लालः शौर्यवीर्यभाजा
गौडेश्वरसिंहासनमारुरोह राजा।
दाक्षिणात्यनपतिकुलजातः स च भूपः
विजितोत्कलराढ़बङ्गमगधकामरूपः ।।७७।।

अन्वयः–(सः) बल्लालः राजा शौर्यवीर्यभाजा भुजबलेन गौडेश्वरसिंहासनम् आरुरोह। स च विजितोत्कलराढ़बङ्गमगधकामरूपः भूपः दाक्षिणात्यनपतिकुलजातः (आसीत्)।।७७।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सेनवंश के गौड (बंग) देश के शासकों का वर्णन–

अर्थ– वे बल्लाल राजा शौर्य-वीर्य सम्पन्न अपने भुजबल से गौडेश्वर के सिंहासन पर आरूढ हुए थे। उत्कल, राढ, बंग, मगध एवं कामरूप आदि देशों के विजेता वह बल्लाल राजा दक्षिणदेशीय राजा के कुल में उत्पन्न हुए थे।।७७।।

असृजत् स च बल्लालो दानसागरकर्त्ता
ब्राह्मणकुलनियमान् किल गौडावनिभर्त्ता।
स च लिलेख लेखगुरुस्तद्गुरुरनिरुद्धः
पितृदयितां सांख्यवृत्तिमन्तर्जितयुद्धः।।७८।।

अन्वयः–गौडावनिभर्त्ता दानसागरकर्त्ता च सः बल्लालः ब्राह्मणकुलनियमान् असृजत्। लेखगुरुः तद्गुरुः अन्तर्जितयुद्धः सः अनिरुद्धः च पितृदयितां सांख्यवृत्तिं लिलेख।।७८।।

अर्थ–गौडभूमि (आधुनिक बंगाल राज्य) के शासक तथा 'दानसागर' नामक ग्रन्थ के लेखक उन बल्लालराज ने ब्राह्मण-कुल के नियमों का निर्धारण किया तथा उन नियमों को लिखा भी। लेखगुरु (लेखन-विद्या में निपुण) उनके गुरु का नाम अनिरुद्ध था। अन्तःशत्रु काम-क्रोधादि को जीतने वाले उन्होंने पितृदयितास्वरूपिणी (मातृवत् श्रद्धेय) सांख्यवृत्ति (सांख्यसूत्रों पर अनिरुद्धवृत्ति) लिखी थी।।७८।।

काव्यत्वविमर्श–पद्य के अन्तिम पाद का अर्थ पूर्णतः स्पष्ट नहीं हो पा रहा है। विशेषतः 'सांख्यवृत्ति' पद का विशेषण 'पितृदयिता' (पिता की दयिता) यथार्थतः अन्वित नहीं हो रहा है। उसे उपमानतया अन्वित किया गया है।।७८।।

(युग्मकम्)

बल्लालादभवत् किल स च लक्ष्मणसेनः
रथगजहयकलितविपुलबहुलसबलसेनः ।
यागमुक्ततण्डुलकणलुब्धविविधकीरे
गाङ्गवारियामुनजलवीचिसिक्त - तीरे।।७९।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

निचखान स जयस्तम्भनिवहैर्वरमालाः
यशःस्तूपमिव भूपो यज्ञयूपमालाः।
तस्य सचिवपतिरभवत् पशुपतिरतिबोधः
कति लिलेख निबन्धान् स आसीदपि योधः।।८०।।

अन्वयः—बल्लालात् किल रथहयगजकलितविपुलबहुलसबलसेनः सः लक्ष्मणसेनः अभवत्। सः भूपः यागमुक्ततण्डुलकणलुब्धविविधकीरे गाङ्गवारियामुन-जलवीचिसिक्ततीरे जयस्तम्भनिवहैः वरमालाः, यशःस्तूपम् इव यज्ञयूपमालाः (च) निचखान। तस्य सचिवपतिः अतिबोधः पशुपतिः अभवत्, सः (यद्) अपि योधः आसीत् (तथापि) कति निबन्धान् लिलेख।।७९-८०।।

अर्थ—उन राजा बल्लाल सेन से रथों, हाँथियों एवं घोड़ों से निर्मित, विपुल-अतिविशाल-बलवती सेना के स्वामी लक्ष्मणसेन नामक पुत्र हुए थे। उन राजा ने यज्ञों से अवशिष्ट (अत एव वहीं विकीर्ण) चावल के कणों के लोभी विविध शुक आदि पक्षियों से व्याप्त, गङ्गा एवं यमुना की जलतरङ्गों से सिञ्चित, तटों पर, जयस्तम्भ-समूह की श्रेष्ठमाला खड़ी की थी तथा यज्ञों के यूपों की माला भी गाड़ी थी जो मानो उनके यशःस्तूप थे। उनके सचिवों के स्वामी (प्रधान-सचिव) अतिज्ञानवान् पशुपति थे। वे यद्यपि योद्धा थे किन्तु उन्होंने अनेक निबन्ध भी लिखे थे।।७९-८०।।

काव्यत्वविमर्श—यज्ञयूप में यशःस्तूप की सम्भावना की गयी है, अतः उत्प्रेक्षा अलङ्कार है।

यच्चकार बुधवैद्यो विदितषत्वणत्वः
स कातन्त्रपरिशिष्टं श्रीश्रीपतिदत्तः।
अकरोत् पशुपतितनयः कविगोपीनाथः
व्याख्यामयमस्य स सर उज्ज्वलबहुपाथः।।८१।।

अन्वयः—विदितषत्वणत्वः बुधवैद्यः सः श्रीश्रीपतिदत्तः यत् कातन्त्रपरिशिष्टं चकार, अस्य व्याख्याम् अयं पशुपतितनयः कविगोपीनाथः अकरोत्। सः उज्ज्वलबहुपाथः सरः (आसीत्)।।८१।।

अर्थ—षत्व-णत्व विधान आदि (व्याकरण शास्त्र के सिद्धान्तों) के वेत्ता

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

(महावैयाकरण), विद्वान एवं वैद्य अथवा विद्वानों के वैद्य (विद्वानों के वैदुष्याहङ्काररूपी रोग की चिकित्सा करने ८ ले वैद्यस्वरूप, शास्त्रार्थ में पराजित कर अन्य विद्वानों के अहङ्कार को नष्ट करने वाले) श्री श्रीपतिदत्त (लक्ष्मण सेन के सभापण्डित) ने जो कातन्त्रपरिशिष्ट नामक ग्रन्थ लिखा था, उसकी व्याख्या पशुपति के पुत्र कवि गोपीनाथ ने की थी। ये कविगोपीनाथ उज्ज्वल, निर्मल, अगाध-जल से भरे हुए सरोवरस्वरूप थे।।८१।।

काव्यत्वविमर्श—श्रीपतिदत्त पर बुधवैध का आरोप होने से रूपक अलङ्कार है। कविगोपीनाथ पर उज्ज्वलबहुपाथ सर का आरोप होने से रूपक अलङ्कार है।

विललास च हलायुधो धर्म्यासनसंस्थः
स ब्राह्मणसर्वस्वं विलिखन् सममंस्त।
पाणिनिकृतसूत्राणां शास्त्रसुदृढभित्तिः
सभ्यबौद्धपुरुषोत्तमरचिता वरवृत्तिः।।८२।।

अन्वयः—धर्म्यासनसंस्थः हलायुधः च विललास। सः ब्राह्मणसर्वस्वं विलिखन् सममंस्त। पाणिनिकृतसूत्राणां शास्त्रसुदृढभित्तिः वरवृत्तिः सभ्यबौद्ध-पुरुषोत्तमरचिता अस्ति।।८२।।

अर्थ—धर्म्यासन पर प्रतिष्ठित (राजा लक्ष्मण से की मन्त्रिषद् में धर्माधिकारी पद पर नियुक्त) होकर हलायुध (कोशकर्त्ता) नामक विद्वान् विलसित होते थे, उन्होंने ब्राह्मण-सर्वस्व नामक ग्रन्थ लिखा था। महर्षि पाणिनि के सूत्रों की, शास्त्र को संरक्षित करने के लिये सुदृढ़-भित्ति-स्वरूप श्रेष्ठवृत्ति, सभ्यबौद्ध (लक्ष्मणसेन की विद्वत्परिषद् के बौद्धविद्वान्) पुरुषोत्तम ने रची थी।।८२।।

धोयिशरणगोवर्द्धनजयदेवैः कविभिः
कविनोमापतिना सह कविताम्बुजरविभिः।
लक्ष्मणवरपतिरकरोत् परिषदमतिपुण्यां
कालः किल लक्ष्मणपुरमकरोज्जनशून्याम्।।८३।।

अन्वयः—सः लक्ष्मणवरपतिः कविना उमापतिना सह कविताम्बुजवारिभिः धोयिशरणगोवर्द्धनजयदेवैः कविभिः अतिपुण्यां परिषदम् अकरोत्, (किन्तु) कालः किल लक्ष्मणपुरं जनशून्याम् अकरोत्।।८३।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अर्थ–लक्ष्मण नामक उन श्रेष्ठराजा ने उमापति नामक कवि के साथ, कवितारूपी कमल को विकसित करने वाले सूर्यस्वरूप धोयिशरण, गोवर्द्धन, जयदेव नामक कवियों द्वारा अतिपवित्र कविपरिषद् का निर्माण किया था, किन्तु काल (समय, विधि–विधान) ने उस लक्ष्मणपुरी को (कालान्तर में) जनरहित कर दिया था।।८३।।

काव्यत्वविमर्श–धोयि आदि कवियों पर रवि एवं कविता पर अम्बुज का आरोप होने से रूपक अलङ्कार है।।८३।।

(सन्दानितकम्)

जनपदविध्वंसनेन गौडराजधानी
ध्वस्ताऽहह मुहुरभवत् सर्वविषयहानिः।
गरललिप्तमिव नगरं हित्वा जनरञ्जनौ
प्रकृतिभिश्च सह सहसा लक्ष्मणनृपनन्दनौ।।८४।।

घोरध्वनिशतावर्त्तपर्वतनिभतरङ्गां
सागरमिव सलिलराशिमनूड्डीनविहङ्गाम्।
ब्रह्मपुत्रमिलनभीमभूमिं गहनगङ्गां
वीचिवेगपातैः कृतपुलिनपुरशतभङ्गाम्।।८५।।

पद्माभिधसरितं किल समुत्तीर्य जग्मतुः
तत्र पूर्वबंङ्गेषु च कृतनगरौ तस्थतुः।
गर्गयवनकालान्तककालाविव तौ नृपौ
सकलासु प्रकृतिषु भुवि बभूवतुः सत्कृतौ।।८६।।

अन्वयः–अहह! जनपदविध्वंसनेन गौडराजधानी मुहुः ध्वस्ता अभवत् (तेन च) सर्वविषयहानिः (अभवत्)। जनरञ्जनौ (तौ) लक्ष्मणनृपनन्दनौ नगरं गरललिप्तम् इव सहसा हित्वा प्रकृतिभिः सह च–

घोरध्वनिशतावर्तपर्वतनिभतरङ्गां, सागरम् इव सलिलराशिम्, अनूड्डीनविहङ्गां ब्रह्मपुत्रमिलनभूमिं, वीचिवेगपातैः कृतपुलिनपुरशतभङ्गां, गहनगङ्गां (तत्र) पद्माभिधं सरितं समुत्तीर्य जग्मतुः। तत्र पूर्वबङ्गे च कृतनगरौ तस्थतुः।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

गर्गयवनकालान्तककालौ इव तौ नृपौ भुवि सकलासु प्रजासु सत्कृपौ बभूवतु:।।८४-८६।।

अर्थ–अहह! (यवन–आक्रान्ता बख्तियार–खिलजी द्वारा किये गये) जनपद विध्वंस से वह गौडदेश की राजधानी (लक्ष्मणपुरी) ध्वस्त हो गयी, जिससे पूरे देश की अथवा वहाँ आस-पास के सभी देशों की बहुत हानि हुयी। मानो विष से लिप्त उस नगर को सहसा त्याग कर, वे राजा लक्ष्मणसेन के जनरञ्जक दोनों पुत्र प्रजाओं के साथ–

भयङ्करनाद करने वाले सैकड़ों आवर्तों (भँवरों) एवं पर्वतों के समान ऊँची तरङ्गों वाली, सागर के समान अपरिमेय जलराशि से पूर्ण, दोनों तटों पर उड़ते हुए पक्षियों से शोभित, तरङ्गों के वेगवान् प्रहारों से तटरूपी सैकड़ों नगरों को पटकने वाली, ब्रह्मपुत्र-नद के संगम से भयङ्कर स्वरूप वाली गहनगङ्गा, जिसका नाम वहाँ पद्मा है, को पार कर आगे गये, वहाँ पूर्वबङ्ग देश में नगर बना कर रहने लगे।

गर्ग, यवन और कालान्तक (आदि शत्रुओं) के कालस्वरूप वे दोनों राजा (लक्ष्मणसेन के दोनों पुत्र) सम्पूर्ण प्रजा पर करुणापूर्ण होकर राज्य करने लगे।।८४-८६।।

काव्यत्वविमर्श–नगर में गरललिप्तता की सम्भावना होने से उत्प्रेक्षा अलङ्कार है। पद्मानदी के समस्त विशेषण उसकी भयङ्करता को व्यक्त करने के अभिप्राय से प्रयुक्त हैं, अतः परिकर अलङ्कार है। दोनों राजपुत्रों में यवनों के काल की सम्भावना की गयी है, अतः उत्प्रेक्षा अलङ्कार है।।८४-८६।।

(युग्मकम्)

एकः किल तत्र राज्यमकरोद् धनधन्यः
प्राग्ज्योतिषमुपस्थाय तत्र राज्यमन्यः।
सेनराजवंशमुकुटलक्ष्मणस्य सूनवः
बहवो भुवि बभूवुश्च वर्द्धितबलबाहवः।।८७।।

कूर्मायुनि गिरितटेषु तेषु पञ्चनदेषु
चक्रुः किल पृथक् पृथक् राज्यं जनपदेषु।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

दिल्लीश्वरयवनराजशासनं न मेनिरे
ते च न खलु दाक्षिणात्यभूपा अपि भेजिरे।।८८।।

अन्वयः—(तयोः) धनधन्यः एकः किल तत्र (पूर्वबङ्गे) (राज्यम् अकरोत्) अन्यः प्राग्ज्योतिषम् उपस्थाय तत्र राज्यमकरोत्। सेनराजवंशमुकुटलक्ष्मणस्य भुवि बहवः वर्द्धितबलवाहवः सूनवः च बभूवुः। तेषु (केचन) कूर्मायुनि, गिरितटेषु, पञ्चनदेषु जनपदेषु किल पृथक्-पृथक् राज्यं चक्रुः। (ते) दिल्लीश्वरयवन-राजशासनं न मेनिरे। ते च खलु दाक्षिणात्यभूपाः अपि न भेजिरे॥८७-८८॥

अर्थ—उन दोनों में से एक ने धनादि से धन्य होकर वहाँ (पूर्वबङ्ग पर) राज्या किया, दूसरे ने प्राग्ज्योतिष (कामरूप-वर्तमान असम) में प्रतिष्ठित होकर वहाँ राज्य किया। सेननामक राजवंश के मुकुटस्वरूप राजा लक्ष्मण सेन के भूमि पर ऐसे ही, समृद्धबलशाली बाहुओं वाले बहुत से पुत्र थे। उन्होंने कूर्मायु (कुमायूँ) गिरितट एवं पञ्चनद (पञ्जाब) आदि जनपदों पर पृथक्-पृथक् (स्वतन्त्ररूप से) राज्य किया। उन पुत्रों ने दिल्लीश्वर यवनराज के शासन को कभी स्वीकार नहीं किया, (इनके साथ) दाक्षिणात्य राजाओं ने भी यवनशासन को कभी नहीं सेवित किया था (माना था)॥८७-८८॥

बङ्गदेशे यवनाक्रमणवर्णनम्—

यवन-नृपति-सेनापतिः वक्तियारधावत्
शून्यं खलु गौडनगरमवलोक्य स तावत्।
तत्र तत्र मन्दिरेषु सन्निवेश्य यवनान्
गङ्गातटनवद्वीपपल्लीं प्रति गतवान्।।८९।।

अन्वयः—यवननृपतिसेनापतिः वक्तियार् अधावत्। सः तावत् गौडनगरं खलु शून्यम् अवलोक्य तत्र–तत्र मन्दिरेषु यवनान् सन्निवेश्य, गङ्गातटनवद्वीप-पल्लीं प्रति गतवान्॥८९॥

बङ्गदेश पर यवनों के आक्रमण का वर्णन—

अर्थ—यवनराज के सेनापति बख्तियार (खिलजी) ने आक्रमण किया, किन्तु उसने उस गौडराज के नगर (लक्ष्मणपुर) को शून्य (आक्रमण के पूर्व ही प्रजा सहित लक्ष्मणसेन के पुत्रों के नगर छोड़कर चले जाने के

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कारण जनरहित) देख कर, वहाँ मन्दिरों (भवनों) में यवनों को बसा कर, वह स्वयं गङ्गातट पर स्थित नवद्वीप नामक ग्राम की ओर चला गया।।८९।।

काव्यत्वविमर्श—वक्तियारशब्द अदन्त है, किन्तु कवि ने यहाँ 'वक्तियार्' रकारान्त प्रयुक्त किया है, जो कि छन्द की सिद्धि के लिये उचित है। अन्यत्र अदन्त ही प्रयुक्त है।।८७-८८।।

(युग्मकम्)

माणिक्योपाधिरत्र लक्ष्मण इति नाम
न्यवसत् किल सामन्तः स च विसृज्य धाम।
यवनभीतिविह्वलस्तु सहकुलगुरुकालिका-
मादाय च पुरोहितं वधूपुत्रबालिकाः।।९०।।

सक्षेपणि-बहुनाविक-वाहितां स तरणिम्
समारुह्य धावति स्म नावैक्षत धरणिम्।
समतिवाह्य बहुदिवसान् अवतस्थे तरणौ
नाबध्यत कुत्रचिदपि भीतेन च तेन नौः।।९१।।

अन्वयः— अत्र माणिक्योपाधिः लक्ष्मणः इति नाम सामन्तः किल न्यवसत्। सः च यवनभीतिविह्वलः धाम विसृज्य, सहकुलगुरुकालिकां, पुरोहितं वधूपुत्रबालिकाः च आदाय, सः सक्षेपणिबहुनाविकवाहितां तरणिं समारुह्य धावति स्म, धरणिं न अवैक्षत,बहुदिवसान् समतिवाह्य तरणौ अवतस्थे, भीतेन तेन नौः कुत्रचित् अपि न अबध्यत।।९०-९१।।

अर्थ—वहाँ 'माणिक्य' उपाधिधारी लक्ष्मणनाम के सामन्त रहते थे। वे यवनों के भय से विह्वल (भीत) होकर, घर (नगर) छोड़कर, कुलगुरु के साथ (कुलदेवी) कालिका (की प्रतिमा) को तथा पुरोहित, वधुओं पुत्रों-पुत्रियों को लेकर, क्षेपणी (डाँड़ा-चप्पू) से युक्त, अनेक नाविकों द्वारा सञ्चालित (बड़ी) नौका परा आरोहित होकर भागे। वे बहुत दिनों तक नाव पर ही रहे, भयभीत उन्होंने कहीं भी किनारे नाव नहीं बाँधी, बाँधने की बात तो दूर उतने दिनों तक उन्होंने भूमि का दर्शन तक नहीं किया।।९०-९१।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

(युग्मकम्)

नवखल्लकनामधेयजनपदमभयोऽविशत्
निर्माय च तत्र धाम तत्रैव च सोऽवसत्।
शौर्यवीर्यभुजबलतो वक्तियारस्त्वधिकाः
निर्दयत्वनिष्ठुरत्व - घोरचण्डतादिकाः।।९२।।

साधयन् स बङ्गविजयमबाधेन साहसी
धावति स्म तप्तरुधिरमिव दधद् दृढवक्षसि।
लौहित्यमगाधसिन्धुमुत्तीर्य स सेतुना
प्राविशच्च कामरूपमर्द्धचन्द्रकेतुना।।९३।।

अन्वयः— अभयः (सः) नवखल्लकनामधेयजनपदम् अविशत्। तत्र च सः धाम निर्माय तत्र एव च अवसत्। सः साहसी वक्तियारः शौर्यवीर्यभुजबलतः अधिकाः निर्दयत्वनिष्ठुरत्वघोरचण्डितादिकाः, दृढवक्षसि तप्तरुधिरम् इव दधत्, अबाधेन बङ्गविजयं साधयन्, धावति स्म। सः सेतुना अगाधसिन्धुं लौहित्यम् उत्तीर्य अर्धचन्द्रकेतुना (ध्वजेनोपलक्षितः) कामरूपं च प्राविशत्।।९२-९३।।

अर्थ—(कुछ दिनों बाद) यवनों के भय से विमुक्त होकर उन्होंने नवखल्लक नामक जनपद में प्रवेश किया, वे वहीं घर बना कर निवास करने लगे। इधर वह साहसी, वख्तियार नामक यवन-आक्रान्ता शौर्य-वीर्य एवं भुजबल के मद से और अधिक निर्दयता, निष्ठुरता एवं घोर–क्रोधशीलता को धारण करता हुआ, दृढ वक्षःस्थल में मानो तप्तरुधिर को धारण करके (चारों ओर आक्रमण करके) विना किसी बाधा के बङ्गदेश पर विजय करता हुआ दौड़ रहा था। लौहित्यनामक अगाध (अत्यन्त–गहरी) नदी को सेतु द्वारा पार करके वह अर्धचन्द्र-चिह्नाङ्कित झण्डों वाली सेना के साथ कामरूप देश में प्रविष्ट हो गया।।९२-९३।।

काव्यत्वविमर्श—वक्तियार की निर्दयता तप्तरुधिररूप में सम्भावित है अतः उत्प्रेक्षा अलङ्कार है। इस पद्य में वक्तियार शब्द अदन्त प्रयुक्त है।।९२-९३।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

नाबाधत कामरूपसैन्यं पथि पङ्किल-
मुन्मत्तमिव निपतन्तमनिवार्यं च तं किल।
कियद्दूरमित्थं स च समधिगम्य पुरस्तात्
गन्तुं न शशाक तत्र रुद्धः खलु समन्तात्।।९४।।

(मूले 'बद्धः' इति पाठः अनन्तरपद्येन ज्ञायते यत् सः तत्र रुद्धः न तु बद्धः)

अन्वयः—कामरूपसैन्यं पङ्किलम् उन्मत्तम् इव निपतन्तम् (अत एव) अनिवार्यं च तं किल पथि न अबाधत। इत्थं च सः कियत् दूरं समधिगम्य, तत्र समन्तात् रुद्धः खलु पुरस्तात् गन्तुं न शशाक।।९४।।

अर्थ—कामरूप की सेना ने कलङ्की, उन्मत्त के समान आक्रमण करने वाले उस बख्तियार को अनिवार्य (न रोकने योग्य) मानकर मार्ग में बाधित नहीं किया (मार्ग में उसका प्रतिरोध नहीं किया)। इस प्रकार वह कुछ दूर आया, किन्तु (कामरूप की सेना द्वारा) चारों ओर से रुद्ध (अवरुद्ध) हो जाने के कारण (घेर लिये जाने के कारण) आगे नहीं बढ़ सका।।९४।।

काव्यत्वविमर्श—वक्तियार का सादृश्य उन्मत्त से वर्णित है अतः उपमा अलङ्कार है।

मूल में 'अनिवार्यं' पाठ है, तदनुसार कामरूप सौन्दर्य ने उसे निवारित न करके, ऐसा अर्थ होगा जो कि 'नाबाघत' से ही उक्त है। तदपेक्षया 'अनिवार्यम्' पाठ उचित प्रतीत होता है। 'उन्मत्तमिवापतन्तम् अतः अनिवार्यम्' ऐसा अर्थ करने से काव्यलिङ्ग की सिद्धि होती है। एवमेव मूल में 'बद्धः' पाठ है, किन्तु अग्रिम वर्णन से ज्ञात होता है कि वह अवरुद्ध किया गया था, न कि बाँधा गया था, अतः 'रुद्ध' पाठ उचित प्रतीत होता है।।९४।।

परतः परवर्त्तिनीभिरुद्धततरुपङ्क्तिभि-
र्जीमूतस्पर्द्धिनीभिरन्धकारमूर्त्तिभिः ।
दुर्गमदृढदुर्गं पथि ताभिरेव मुहूर्त्तात्
स ससर्ज च कामरूपराजः खलु समन्तात्।।९५।।

अन्वयः— परतः सः कामरूपराजः च पथि मुहूर्त्तात् जीमूतस्पर्धिनीभिः अन्धकारमूर्तिभिः परवर्तिनीभिः ताभिः तरुपङ्क्तिभिः एव दुर्गमदृढदुर्गं ससर्ज।।९५।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अर्थ–तदनन्तर उस कामरूप के राजा ने मार्ग में मुहूर्त्त भर में, मेघों से स्पर्धा करने वाली (अत्युन्नत), मूर्तिमान (साक्षात्) अन्धकार–स्वरूप (अत्यन्त सघन), चारों ओर स्थित उद्धत वृक्षों की पङ्क्तियों द्वारा दुर्गम दृढ़–दुर्ग का निर्माण कर लिया। (उन सघन–उन्नत–वृक्षों का दुर्ग के रूप में उपयोग किया)।।९५।।

दिग्भ्यः खलु मुहुर्मुहुर्न्यपतच्छरसहस्रं
केवलमुपलानामपि दृढखण्डैरजस्रम्।
केऽक्षिपन् स नालोकत तेषामपि न कञ्चन
स्वात्मानं मन्यते स्म मृतमिव कृतवञ्चनः।।९६।।

अन्वयः– (तदनन्तरं वक्तियारसैन्योपरि) दिग्भ्यः खलु मुहुः मुहुः केवलम् उपलानां दृढखण्डैः अपि अजस्रं शरसहस्रं न्यपतत्। (तानि) के अक्षिपन् (इति) तेषां कञ्चन अपि न आलोकत। कृतवञ्चनः (सः वक्तियारः) स्वात्मानं मृतम् इव मन्यते स्म।।९६।।

अर्थ–उसके बाद (चारों ओर से घिरी उस बख्तियार की सेना पर) चारों दिशाओं से न केवल हजारों बाण निरन्तर गिरने लगे अपितु पत्थरों के दृढ़-खण्ड (कठोर पत्थरों के टुकड़े) भी बरसने लगे। ये वाण और पत्थर कौन फेक रहा था, ये किसी को दिखायी नहीं दिया। वञ्चना करने वाला (छल से आक्रमण करने वाला) या कृतवञ्चन अर्थात् जो वञ्चित किया गया है (चतुरता से छलपूर्वक जिस पर आक्रमण किया जा रहा है) ऐसा वह बख्तियार खिलजी अपने को मरा हुआ–सा मान रहा था। (उसे लग रहा था कि अब मरने से नहीं बच सकते)।।९६।।

कति कति पथि सेनाः कति तुरगाः कति परितः
न्यपतन् किल सृष्टिरभवदिह शोणितसरितः।
अद्यापि च कामरूपभुवि राजति निरग्नि-
र्दिल्लीश्वरयवनसैन्यविजयलब्धशतघ्नी ।।९७।।

अन्वयः– (हे सति!) पथि परितः कति-कति सेनाः, कति कति तुरगाः किल न्यपतान्। इह शोणितसरितः सृष्टिः अभवत्। अद्यापि च कामरूपभुवि निरग्निः दिल्लीश्वरयवनसैन्यविजयलब्धशतघ्नी राजति।।९७।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अर्थ–वहाँ उसकी कितनी-कितनी सेना, कितने-कितने घोड़े हताहत होकर गिरे (अर्थात् अगणित सैनिक और घोड़े हताहत हुए)। वहाँ तो रक्त की नदी की सृष्टि हो गयी (खून की नदी बहने लगी)। उस कामरूप की भूमि पर दिल्लीश्वर की सेना पर विजय के बाद प्राप्त शतघ्नी (तोप) आज भी शोभित हो रही है, यद्यपि आज वह निरग्नि है– उसमें आज अग्नि (गोला-बारूद) नहीं है।।९७।।

कामरूपमेत्य क्षयमाययुर्हि तुरुष्काः
शिखरिदृषदि लिपिमिमां तु पश्यन्तु हतरुष्काः।[१]
पश्चादपि समपसृत्य समवलोक्य तरुवृतिं
सोऽमन्यत वक्तियार आत्मजनितदुष्कृतिम् ।।९८।।

अन्वयः– "तुरुष्काः हि कामरूपम् एत्य क्षयम् आययुः" इमां शिखरि-दृषदि (उट्टङ्कितां) लिपिं तु हतरुष्काः पश्यन्तु। पश्चात् समपसृत्य अपि तरुवृतिं समवलोक्य सः वक्तियारः (इमां विपदम्) आत्मजनितदुष्कृतिम् अमन्यत।।९८।।

अर्थ–"कामरूप देश में आकर तुरुष्क (तुर्क-यवन) विनाश को प्राप्त हो गये" यह लिपि (वाक्य) आज भी (गौहाटी नगर के निकट स्थित) पर्वत की शिला पर लिखी है, इसे अब क्रोध त्याग कर देखिये। उस बख्तियार ने पीछे हट कर भी चारों ओर वृक्षों की बाड़ (घेरा) देख कर, उसे अपना ही दुष्कर्म माना। (अपने ही दुष्कर्मों के फलस्वरूप उत्पन्न हुयी विपत्ति माना)।।९८।।

सोऽवशेषसेनयैव कुर्वन्नतिसाहसं
समुच्छिद्य कमपि कमपि पदपं ससाध्वसम्।
स समाविष्कृत्य च कथमपि गहनां पद्यां
स तया पथि निःसृत्य न्यपतद् गुरुनद्याम्।।९९।।

अन्वयः– सः अतिसाहसं कुर्वन् अवशेषसेनया (सह) एव ससाध्वसं

---

१. शाके तुरङ्गयुग्मेशे मधुमासत्रयोदशे।
कामरूपं समागम्य तुरुष्काः क्षयमाययुः।।
गौहाटीनगरसन्निहितगिरिगात्रलिखिता लिपिरियम्।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कमपि कमपि पादपं समुच्छिद्य, सः कथमपि गहनां पद्यां समाविष्कृत्य, तया पथि निःसृत्य, सः गुरुनद्यां न्यपतत्॥९९॥

अर्थ–उस बख्तियार ने अत्यन्त साहस करते हुए बची हुयी सेना के साथ (वहाँ से निकल भागने के लिये) एकाध-एकाध वृक्ष काटकर किसी तरह एक सकरी पद्या-पगडण्डी (एकपदी) बनायी। उस पगडण्डी से वह तरुगहन से बाहर मार्ग पर तो निकल आया, किन्तु निकलते ही गहरी नदी (ब्रह्मपुत्र) में गिर पड़ा॥९९॥

(सन्दानितकम्)

तीव्रतुङ्गवीचिभङ्गमुग्रं नदराजं
भग्नसेतुमवलोक्य स भीमघूर्णिभाजम्।
सहसा स च साहसेन सहसैनिकपूरुषः
शेषवाजिसादिभिरपि धिक्कृतनिजपौरुषः॥१००॥

तरितुमिच्छुरपतत् तत्स्रोतसि गुरुभीषणे
दर्शितघनघोरवेगकृतावतरणवारणे।
ऊर्मयस्तु कूर्मपृष्ठसदृशाः सुनतोन्नताः
सबलचण्डवेगैः खलु पतिता इव पर्वताः॥१०१॥

मज्जयन्त उच्चैरुन्मज्जयन्त उद्धतान्
घूर्णिषु घनघूर्णनैरपातयन् द्रुतविद्रुतान्।
ब्रह्मपुत्रनदसलिले सर्वे बत शेरते
तटक्षिप्तवक्तियार् स जीवितं स्म सेवते॥१०२॥

अन्वयः– (सः) तीव्रतुङ्गवीचिभङ्गम् उग्रं भीमघूर्णिभाजं नदराजं (ब्रह्मपुत्रम्) भग्नसेतुम् अवलोक्य, धिक्कृतनिजपौरुषः अपि सहसैनिकपूरुषः सः शेषवाजिसादिभिः (सह) तरितुम् इच्छुः दर्शितघनघोरवेगकृतावतरणवारणे गुरुभीषणे स्रोतसि अपतत्। सबलचण्डवेगैः पातिताः पर्वताः इव, कूर्मपृष्ठसदृशाः सुनतोन्नताः ऊर्मयः तु उद्धतान् द्रुतविद्रुतान् (तान् यवनान्) मज्जयन्तः उच्चैः उन्मज्जयन्तः घनघूर्णनैः घूर्णिषु अपातयन्। बत सर्वे ब्रह्मपुत्रनदसलिले शेरते (स्म), सः तटक्षिप्तवक्तियार् (केवलं) जीवितं सेवते स्म॥१००-१०२॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अर्थ—उसने तीव्र-ऊँची तरंगों के टकराने से उग्र, भयङ्कर भँवरों से युक्त उस नदराज (ब्रह्मपुत्र) को टूटे हुए सेतु वाला देख कर, अपने पौरुष को धिक्कारते हुए, बचे हुए सैनिकों, घोड़ों एवं घुड़सवारों के साथ साहस से सहसा उसे पार करना चाहा, और उस अतिभयङ्कर जलप्रवाह में गिर पड़ा (कूद पड़ा)। वह जलप्रवाह अपने घनघोर वेग को दिखा कर मानो उसे पानी में उतरने से मना कर रहा था। कच्छप की पींठ की तरह उसकी ऊँची-नीची तरङ्गें ऐसी लग रहीं थी मानो बल के साथ प्रचण्ड वेग से पर्वत गिर रहे हों। (भय के कारण) द्रुतगति के भागते हुए उन उद्धत यवनों को मज्जित-उन्मज्जित (डुबोतीं तथा ऊपर फेंकती हुयीं) करती हुयीं तथा भँवरों में तेजी से घुमाती हुयीं उन तरङ्गों ने अन्ततः उन्हें भँवरों में पटक दिया। हाय! वे सभी ब्रह्मपुत्र नद के सलिल में सो गये (डूब कर मर गये)। केवल वह बख्तियार (तरङ्गों द्वारा) तट पर उछाल दिया गया, जिससे वह जीवित था।।१००-१०१-१०२।।

यत्र बौद्धविहारे स कृत्तबौद्धमस्तकैः
क्रीडति स्म रुचिरैरपि भस्मीकृतपुस्तकैः।
तत्र कोऽपि बौद्धः किल तं विलोक्य विपन्नं
स्वाश्रयञ्च तस्मै पुनरददादपि तदन्नम्।।१०३।।

अन्वयः— सः यत्र बौद्धविहारे कृत्तबौद्धमस्तकैः रुचिरैः भष्मीकृतपुस्तकैः अपि क्रीडति स्म, तत्र किल कोऽपि बौद्धः तं विपन्नं विलोक्य, तस्मै स्वाश्रयं पुनः तदन्नम् अपि. अददात्।।१०३।।

अर्थ—उस बख्तियार ने जिस बौद्धबिहार में काटे गये बौद्ध-श्रमणों के मस्तकों से तथा जलायी गयीं रुचिर (बहुमूल्य) पुस्तकों से क्रीडा की थी, उसी विहार के किसी बौद्ध ने उसे विपत्ति-ग्रस्त देख कर, आश्रय दिया तथा अन्न (भोजन) भी दिया।।१०३।।

पृथ्विराजौजोवर्णनम्—

पृथ्वीश्वरि! पृथ्विराज उरसि तव लालितः
ननु नृपशतसेवितपददिल्लीपतिरीक्षितः।
एकादशवारमेष गर्गयवनराजम्
दूरमनयदपि न वेत्सि तं भुजबलभाजम्।।१०४।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अन्वयः— हे पृथ्वीश्वरि! ननु तव उरसि लालितः, नृपशतसेवितपददिल्लीपतिः पृथ्वीराजः (त्वया) ईक्षितः? एषः एकादशवारं गर्गयवनराजं दूरम् अनयत्। भुजबलभाजं तम् अपि न वेत्सि?॥१०४॥

पृथ्वीराज के प्रताप का वर्णन—

अर्थ—हे पृथ्वीश्वरि! तुम्हारे वक्षःस्थल पर लालित (भारतभूमि पर पले-बढ़े) सैकड़ों राजाओं द्वारा सेवित चरणों वाले, (महाराज) पृथ्वीराज को तो तुमने देखा होगा? उन्होंने गर्ग-यवनराज (मोहम्मद गोरी) को ग्यारह बार दूर तक खदेड़ा था। उन भुजबलधारी (पृथ्वीराज) को भी नहीं जान रही हो?।१०४।

समुत्थाय यवनराजसिंहासनमारा-
दोड्रबङ्गचितोरेषु ताः प्रतापधाराः।
अनवरतमकम्पयंस्तु, लौहसुदृढदुर्गा-
द्दितिसुतमिव यवनसैन्यमपातयद् दुर्गा।।१०५।।

अन्वयः— उड्रबङ्गचितोरेषु (यस्य) ताः प्रतापधाराः समुत्थाय यवनराज-सिंहासनम् आरात् अनवरतम् अकम्पयन्। दुर्गा दितिसुतम् इव (यः) यवनसैन्यं लौहसुदृढदुर्गात् अपातयत्॥१०५॥

अर्थ—उड्र-बंग एवं चितोर देशों में जिनकी विख्यात प्रताप-धाराओं ने समुत्थित होकर दूर से ही यवनराज की सिंहासन को निरन्तर कम्पित किया था। लोहे से समान सुदृढ़ दुर्ग से यवनों की सेना को वैसे ही पटका था, जैसे दुर्गा जी ने दितिसुत (दैत्य-महिषासुर) को निपातित किया था॥१०५॥

काव्यत्वविमर्श—यवन सौन्य को दुर्ग से पटकने वाले पृथ्वीराज का सादृश्य दितिसुत को निपातित करने वाली दुर्गा से वर्णित है, अतः वाक्योपमा अलङ्कार है॥१०५॥

शिवराजविजयवर्णनम्—

दक्षिणदिशि सुनिशितमसिमसितकान्तिमुज्ज्वलम्
दक्षिणकरमुष्टिगर्भगतमुद्दधदुल्ललम्।
दिल्लीश्वरयवनराजसैन्यसिन्धुममर्द्दीत्
को ननु वद जानासि न स शिवाजिर्विश्वजित्।।१०६।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अन्वयः— दक्षिणदिशि सुनिशितम्, असितकान्तिम्, उज्ज्वलम्, उल्ललं, दक्षिणकरगर्भगतम् असिम् उद्दधत् (यः) दिल्लीश्वरयवनराजसैन्यसिन्धुम् अमर्दीत्। सः ननु कः? वद, न जानासि? (सः) विश्वजित् शिवाजिः (आसीत्)।।१०६।।

शिवाजी महाराज की विजय का वर्णन—

अर्थ—जिसने दक्षिण दिशा में (महाराष्ट्रादि प्रान्तों में) सुतीक्ष्ण, श्यामवर्ण की कान्तिवाली, देदीप्यमान लपलपाती हुयी, दाहिने हाँथ की मुट्ठी के गर्भ में समाहित, तलवार को धारण कर दिल्ली के यवन–बादशाह (औरङ्गजेब) की सेना का मर्दन किया था, वे कौन थे? बोलो, उनका नाम नहीं जानती हो? (यदि नहीं जानती हो तो मैं बताता हूँ) वे विश्वविजेता शिवाजी महाराज थे।।१०६।।

(युग्मकम्)

जय भवानि भवानीति घोरसिंहनादम्
समुच्चार्य समुत्पाद्य झटिति रणोन्मादम्।
कम्पयन्त इव मनांसि यवनयोधयूनाम्
दिल्लीश्वरसिंहासनमपि वपुर्वधूनाम्।।१०७।।

वादितघनघोरध्वनिभीमयुद्धपटहाः
विस्मापितविश्वग्वेगदृप्तसैन्यनिवहाः ।
आपतन्त ऊद्ध्र्वादिव यस्य देवि! सहसा-
मथ्नन् किल दिल्लीश्वरसैन्यानि च महसा।।१०८।।

अन्वयः— हे देवि! यस्य 'जय भवानि-जय भवानि' इति घोरसिंहनादं समुच्चार्य, झटिति रणोन्मादं समुत्पाद्य, यवनयोधयूनां मनांसि, दिल्लीश्वरसिंहासनं वधूनां वपुः अपि कम्पयन्तः इव, वादितघनघोरध्वनिभीमयुद्धपटहाः, विस्मापित-विश्वग्वेगदृप्तसैन्यनिवहाः, सहसा ऊद्ध्र्वात् आपतन्तः इव महसा च दिल्लीश्वरसैन्यानि किल अमथ्नन्।।१०७-१०८।।

अर्थ—हे देवि! जिनके "जय भवानि-जय भवानि" इस भयङ्कर सिंहनाद का उच्चारण करके (उक्त 'जय भवानि-जय भवानि' इस शब्द (नारे) को सिंहनाद सदृश गभीरध्वनि में उच्चारित करके), झटिति रणोन्माद (युद्ध के

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

लिये अपेक्षित अत्युत्साह) उत्पन्न करके, युवक-यवन-योद्धाओं के मनको, दिल्लीश्वर के सिंहासन को तथा (यवन) वधुओं के शरीर को भी कँपाते हुए, मेघ के समान भयङ्कर ध्वनि करने वाले युद्ध–पटहों के वादक, अपने परितः वेग से सबको विस्मित कर देने वाले, सहसा मानो ऊपर से टूट पड़ने वाले, सैन्य - समूह ने अपने तेज से दिल्लीश्वर की सेनाओं को मथ डाला था॥१०७-१०८॥

अन्तर्दृढलौहवर्म्मबहिरुपहितकञ्चुकं
सुसमाहितमाहूतं दधतं पुनरंशुकम्।
विधृतगुप्तशाणितास्त्रयवनधूर्त्तयोधः
तमवलोक्य सजवसुदृढमालिङ्गदबोधः॥१०९॥

अन्वयः– अन्तः दृढलौहवर्मबहिरुपहितकञ्चुकम्, पुनः अंशुकं दधतम् (इत्थं) सुसमाहितम् आहूतं तं (शिवाजिमहाराजम्) अवलोक्य अबोधः, विधृतगुप्तशाणितास्त्रयवनधूर्त्तयोधः सजवं सुदृढम् आलिङ्गत्॥१०९॥

अर्थ–जो भीतर लोहे का दृढ़ कवच धारण किये हुए थे, उसे ढकने के लिये बाहर कञ्चुक (कुर्ता) पहने हुए थे तथा महीन उपवस्त्र धारण किये थे, इस प्रकार जो पूर्ण सावधान थे तथा जिन्हें (सन्धि करने के लिये) बुलाया गया था, ऐसे शिवाजी महाराज को देख कर, उस अबोध (मूर्ख), भीतर गुप्तरूप से तीक्ष्ण-अस्त्र धारण किये हुए, धूर्त-यवन-योद्धा (अफजल- खाँन) ने देखते ही तेजी से दौड़कर उनका गाढ़ आलिङ्गन किया॥१०९॥

हन्तुकामधूर्त्तस्य तदस्त्रं सबलेरितं
स्पृष्टं किल वर्म्मणैव भुवि पपात चूर्णितम्।
व्याघ्रनखमुदग्रमुग्रमस्त्रं किल सुगूढम्
प्रावेशयदस्योरसि स शिवाजिः समूढम्॥११०॥

(मूले 'वर्म्मणेव' इति पाठः अत्र इवार्थस्य सङ्गतिर्न भवति, तदपेक्षया एवकारस्यौचित्यं, तेन वर्म्मातिरिक्ताङ्गस्पर्शव्यवच्छेदो गम्यते)

अन्वयः– हन्तुकामधूर्तस्य सबलेरितं तदस्त्रं वर्म्मणा स्पृष्टम् एव किल

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

चूर्णितं भुवि पपात। सः शिवाजिः सुगूढम् उदग्रम् उग्रं व्याघ्रनखम् अस्त्रं किल अस्य उरसि समूढं प्रावेशयत्॥११०॥

अर्थ- शिवाजी को मारने की कामना वाले उस धूर्त का बलपूर्वक चलाया गया वह अस्त्र कवच से टकरा कर ही टुकड़े-टुकड़े होकर, भूमि पर गिर गया। इधर शिवाजी महाराज ने गुप्तरूप से धारित (छिपा कर रखे गये) व्याघ्रनख (बघनखा) नामक उठे हुए अग्रभाग वाले भयङ्कर अस्त्र को उसकी छाती में पूरा भोंक दिया॥१०९-११०॥

काव्यत्वविमर्श—मूल में 'वर्म्मणेव' पाठ है, यहाँ इवार्थ की सङ्गति नहीं हो रही है। तदपेक्षया 'वर्म्मणैव' पाठ उचित है। एवकार रखने से वर्म के अतिरिक्त अन्य अंगों का स्पर्श नहीं कर पाया' ऐसा अन्ययोगव्यवच्छेद व्यक्त हो रहा है॥१०९-११०॥

उत्सा इव शिखरिणोऽस्य शोणितशतधारा
निष्पपात तेनाभूः स्नपिता हृतभारा।
दिल्लीश्वरनरपतेः स बलहृतगजसुवाजिः
दुर्गात् परमहरत् किल दुर्गमस्य शिवाजिः॥१११॥

अन्वयः— अस्य शिखरिणः उत्साः इव (आसन् किन्तु तेभ्यः शत्रूणां) शोणितशतधाराः निष्पपात। तेन हृतभारा (त्वम्) स्नपिता अभूः। दिल्लीश्वरनरपतेः बलहृतगजसुवाजिः सः शिवाजिः किल, अस्य दुर्गात् परं दुर्गम् अहरत्॥१११॥

व्याख्या—शिवाजी के राज्य में पर्वत मानो उत्स (प्रस्रवण, निर्झर-उद्गम-स्थल) थे, उनसे रक्त की सैकड़ों धारायें गिरा करतीं थीं। (हे पृथ्वि!) उन शिवाजी के द्वारा हृतभारा (पापियों के भार से मुक्त) होकर तुम उनसे (रक्त धाराओं से) स्नान करतीं थीं। दिल्लीश्वर के नरपति (दिल्ली—बादशाह औरङ्गजेब) के हाँथियों एवं उत्तम नस्ल के घोड़ों का अपहरण करने वाले उन शिवाजी महाराज ने उसके एक के बाद दूसरे दुर्गों का हरण भी किया था। (एक के बाद एक करके अनेक दुर्गों को भी उससे छीना था)॥१११॥

काव्यत्वविमर्श—शिखरी का सादृश्य उत्स से वर्णित है, अतः उपमा है, उनसे शोणितशतधारा प्रवाहित करा कर कवि ने व्यतिरेक अलङ्कार व्यञ्जित किया है॥१११॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

विविधविद्वद्वैदुष्यवर्णनम्

शवरोऽभूत् कुमारिलः प्रभाकरः प्रभया
प्रतिभया स दीप्यते स्म सर्वे श्रुतनिर्भयाः।
कति कति सति तस्य तस्य सन्ति जगति कीर्त्तयः
यत्र यत्र तेषां खलु भान्ति सूक्ष्ममतयः।।११२।।

अन्वयः– शवरः अभूत्, कुमारिलः (अभूत्) प्रभाकरः (अभूत्) सः प्रभया प्रतिभया च दीप्यते स्म। (एते) सर्वे श्रुतनिर्भयाः (आसन्)। हे सति! तस्य तस्य (विदुषः) जगति कति कति कीर्त्तयः सन्ति, तेषां यत्र-यत्र खलु सूक्ष्ममतयः भान्ति।।११२।।

अनेक पूर्ववर्ती विद्वानों के वैदुष्य का वर्णन–

व्याख्या–शवर (स्वामी) कुमारित (भट्ट) और प्रभाकर नामक विद्वान् हुए, वे सब प्रभा (ब्रह्म–तेज) एवं प्रतिभा से प्रकाशित होते थे। ये सभी विद्वान, शास्त्रों में निर्भय थे (शास्त्रों के यथार्थतत्त्व के ज्ञाता होने के कारण प्रतिवादियों से पराजित होने के भय से रहित थे) हे सति! ऐसे ही अनेक विद्वानों की इस जगत् में कितनी-कितनी कीर्तियाँ (कीर्ति स्वरूप ग्रन्थात्मक कृतियाँ) नहीं है? अर्थात् अनेक हैं, जिनमें उनकी सूक्ष्म बुद्धियाँ (सूक्ष्म-शस्त्रतत्त्व–विवेचन) शोभित हो रहीं हैं।।११२।।

उदियाय स शङ्कर इव जगद्गुरुः शङ्करः
सूत्सारिततर्ककठिनखर्परदृढकङ्करः ।
अद्वयमतवादबीजमवपज्जनहृदये
स श्रुतिजलपङ्कीकृतकेदारे समये।।११३।।

अन्वयः– सः जगद्गुरुः शङ्करः शङ्करः इव उदियाय। सूत्सारिततर्ककठिन-खर्परदृढकङ्करः सः समये श्रुतिजलपङ्कीकृतकेदारे जनहृदये अद्वयमतवादबीजम् अवपत्।।११३।।

अर्थ–यहाँ भगवान् शङ्कराचार्य अवतीर्ण हुए थे, जो मानो साक्षात् शङ्कर जी के समान ही थे, उन्होंने (विपक्षियों) के तर्करूपी कठिन–खप्परों एवं दृढ़–कङ्कड़ों का अच्छी तरह उत्सारण (पूर्णतः खण्डन) किया था, तथा

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

लोगों के श्रुतिरूपी जल से पङ्किल (संसिक्त) हृदयरूपी खेत में अद्वैतमतवादरूपी बीजों को बोया था। (वैदिक सिद्धान्तों में श्र॰ एवं विश्वास रखने वाले सनातन धर्मियों को अद्वैतवाद का सिद्धान्त सम्झाया था)॥११३॥

काव्यत्वविमर्श—पूर्वार्ध में शङ्कराचार्य क ादृश्य भगवान् शङ्कर से वर्णित है, अतः उपमा तथा तर्क पर खर्पर-कङ्क॰ आदि का आरोप होने से रूपक अलङ्कार है। उत्तरार्ध में अद्वयवाद पर बीज का जनहृदय पर केदार का तथा श्रुति पर जल का आरोप होने से साङ्गरूपक अलङ्कार है॥११३॥

षड्दर्शनटीकाकृत् तव वक्षसि दिदीपे
वाचस्पतिरुज्ज्वलजलगङ्गातटसमीपे।
श्रीहर्षः कविकुलगुरुनैयायिककेशरी
मधुसूदन आसीदपि तार्किकेष्वमत्सरी।।११४।।

अन्वयः— षड्दर्शनटीकाकृत् वाचस्पतिः उज्ज्वलजलगङ्गातटसमीपे तव वक्षसि दिदीपे। कविकुलगुरुनैयायिककेशरी श्रीहर्षः (तथा) तार्किकेषु अमत्सरी मधुसूदनः अपि आसीत्॥११४॥

अर्थ—षड्दर्शन पर टीकाकरने वाले आचार्य वाचस्पति मिश्र, उज्ज्वल जलवाली गङ्गा के तट पर, तुम्हारे वक्षःस्थल (भारत भूमि) पर ही दीप्त (प्रकाशित-अवतरित) हुए थे। कविकुलगुरु एवं नैयायिककेशरी (कवि-दार्शनिक) महाकवि श्रीहर्ष तथा तार्किकों पर मत्सर (द्वेष) न रखने वाले आचार्य मधुसूदन (सरस्वती) भी यहीं (उत्पन्न हुए) थे॥११४॥

क्षेत्रस्य च तयोरेक आवृतिं विनिर्ममे
चिच्छेद च घासमन्य उदितं हृदि निर्ममे।
जानासि न जननीश्वरकृष्णः किमु कृष्णः
सस्मितमुखि वेदितुमहमस्मि तं सतृष्णः।।११५।।

(मूले 'उदिते' इति पाठः 'हृदि' इत्यस्य विशेषणतया, तदपेक्षया 'उदितम्' इति युक्तं तस्य घासविशेषणता समुचिता।)

अन्वयः— तयोः एकः क्षेत्रस्य आवृत्तिं च विनिर्ममे, अन्यः च निर्ममे हृदि उदितं घासं चिच्छेद। हे जननि! किमु न जानासि? (यत्) ईश्वरकृष्णः

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कृष्णः (आसीत्)। हे सस्मितमुखि! अहं तं (तत्) वेदितुं सतृष्णः (अस्मि)।।११५।।

अर्थ—उनमें से एक (वाचस्पति मिश्र) के क्षेत्र की (खेत की-वैदिक धर्म की) आवृति (बाड़-पशुओं को खेत में घुसने से रोकने के लिये बनायी जाने वाली काँटेदार वृक्षों की पङ्क्ति-वस्तुतः धर्म विरुद्ध विचारों को रोकने के लिये तर्कपूर्ण सिद्धान्त) का निर्माण किया था। दूसरे (श्रीहर्ष) ने निर्मम (श्रद्धारहित) हृदय में उदित (अङ्कुरित) घास को (वस्तुतः भारतीयों के हृदय में उदित नास्तिक विचारों को) काटा (खण्डित किया) था। हे जननि! क्या तुम नहीं जानती हो कि-ईश्वरकृष्ण (सांख्यकारिका-कर्त्ता) साक्षात् कृष्ण ही थे। हे स्मितसहित मुखवाली! मैं उसे जानने के लिये सतृष्ण (उत्कण्ठित) हूँ।।११५।।

काव्यत्वविमर्श—क्षेत्र पद से वैदिकधर्म, आवृति से उसके रक्षक सिद्धान्त तथा घास से नास्तिकता अध्यवसित है, अतः साध्यवसानालक्षणामूलक अतिशयोक्ति अलङ्कार है। मूल में 'उदिते पाठ है, जो कि 'हृदि' का विशेषण हो सकता है, किन्तु वाक्यार्थ अन्वित करने में काठिन्य है। तदपेक्षया उसे 'उदितम्' पाठ मान कर घास के विशेषण के रूप में अन्वित करना अधिक उचित है, अतः ऐसा ही किया गया है।।११५।।

भुवनगुरुं शङ्करमिममजयदुभयभारती
ज्वलदनलद्युतिरुदिता सुदती सुतनुयुवतिः।
एकवर्षसमयमेव सा ररक्ष मण्डनं
स्वं स्वामिनमियमविशज्ज्वलनं वपुरिन्धनम्।।११६।।

अन्वयः— ज्वलदनलद्युतिः उदिता, सुदती सुतनुयुवतिः उभयभारती इमं भुवनगुरुं शङ्करम् अजयत्। सा इयम् एकवर्षसमयम् एव स्वं स्वामिनं मण्डनं ररक्ष (ततः) वपुः इन्धनं (कृत्वा) ज्वलनम् अविशत्।।११६।।

अर्थ—देदीप्यमान अग्नि के समान कान्तिवाली, सुन्दर दाँतों तथा शरीर वाली, युवती उभयभारती (मण्डनमिश्र की पत्नी) ने उन प्रसिद्ध, भूमण्डल के गुरु शङ्कराचार्य को (शास्त्रार्थ में) जीता था। उसने एकवर्ष के समय तक अपने स्वामी (पति) मण्डन मिश्र की (उनके शव की) रक्षा की थी, उसके बाद वह अपने शरीर को इन्धन बना कर अग्नि में प्रविष्ट हो गयी थी (सती हो गयी थी)।।११६।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

काव्यत्वविमर्श—पूर्वार्ध में भारती की द्युति का सादृश्य ज्वलदनलद्युति से वर्णित है, अतः उपमा, उत्तरार्ध में वपु पर इन्धन का आरोप है, अतः रूपक अलङ्कार है॥११६॥

मुदमुदयनमुदिरो दधदुदयं लभते स्म
भवदुरसि श्रीधरोऽपि कुरुते स्म स वेश्म।
उद्योतकरोऽत्र तर्कविद्योद्यतपाणि-
रद्यापि च विद्यतेऽत्र विश्वनाथवाणी॥११७॥

अन्वयः— मुदं दधत् उदयनमुदिरः उदयं लभते स्म। सः श्रीधरः अपि भवदुरसि वेश्म कुरुते स्म। अत्र तर्कविद्योद्यतपाणिः उद्योतकरः (जनिं लेभे), अद्यापि च अत्र विश्वनाथवाणी विद्यते॥११७॥

अर्थ—सदा प्रमोद धारण करने वाले उदयनाचार्यरूपी मेघ यहीं उदित हुए थे। श्रीधराचार्य ने भी आपके हृदय (भारतभूति) पर ही घर बनाया था। तर्कविद्या से उद्यतपाणि (तर्कशास्त्र पर शास्त्रार्थ करने के लिये सदा तत्पर) उद्योतकर (न्यायवार्तिक-कर्त्ता) यहीं हुए थे, यहाँ आज भी विश्वनाथ (पञ्चानन) की वाणी (कारिकावली-मुक्तावली) विराजित है॥११७॥

काव्यत्वविमर्श—उदयनाचार्य पर मुदिर (मेघ) का आरोप होने से रूपक अलङ्कार है॥११७॥

गङ्गेशमुपास्य तस्य कृपया नवसेतुं
तर्कगहनजलधिः किल सुखोत्तरणहेतुम्।
निर्ममे स रघुनाथस्तत्र बाष्पशकटं
जगदीशस्य च करुणा चालयत्यकपटम्॥११८॥

अन्वयः—तर्कगहनजलधिः सः रघुनाथः गङ्गेशम् उपास्य तस्य कृपया (तर्कगहनजलधेः) सुखोत्तरणहेतुं नवसेतुं निर्ममे। तत्र च जगदीशस्य करुणा अकपटं वाष्पशकटं चालयति॥११८॥

अर्थ—तर्क विद्या के गहनजलधिस्वरूप आचार्य रघुनाथ (शिरोमणि) ने अपने गुरु गङ्गेशोपाध्याय की उपासना करके तर्करूपी गहन समुद्र को सुखपूर्वक पार करने के साधनभूत नवीनसेतु का निर्माण किया था। (वस्तुतः गङ्गेशोपाध्याय कृत तत्त्वचिन्तामणि नामक गूढग्रन्थ को समझने के लिये

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

उनके शिष्य रघुनाथ शिरोमणि ने उस पर दीधिति नामक टीका लिखी थी) आचार्य जगदीश की करुणा ने उस दीधितिस्वरूप नव-सेतु पर जागदीशीटीकारूपी वाष्पशकट (मोटर-गाड़ी) को निष्कपट होकर चलाया था।।११८।।

अलङ्कार विमर्श– प्रस्तुत पद्य में कवि ने तर्क पर गहन–जलधि का, दीधिति–टीका पर नवसेतु का तथा जागदीशी–टीका पर वाष्पशकट का आरोप कर रूपकालङ्कार का ग्रथन किया है। उक्त तीन आरोपों में प्रथम शाब्द तथा अन्य दो आर्थ आरोप हैं। रूपक के द्वारा पार्यन्तिक सादृश्य प्रतीति यह होती है कि– जैसे गहन–जलधि को पार करने के लिये सेतु एवं वाष्पयान आवश्यक होता है वैसे ही गङ्गेशोपाध्याय कृत तत्त्वचिन्तामणि को यथार्थतः समझने के लिये दीधिति एवं जागदीश का अध्ययन आवश्यक है।

तर्क पर गहनजलधि का,दीधितिटीका पर सेतु का तथा जागदीशीटीका पर वाष्पशकट का आरोप होने से साङ्गरूपक अलङ्कार है।।१८।।

इह मथुरानाथनगरनवद्वीपकेतुं
पश्यसिं दृढगदो गदाधरः पाति सेतुम्।
वर्द्धते स्म वर्द्धमान इह स वरदराजः
शङ्करोऽत्र जयदेवो गुरुरिव विरराज।।११९।।

अन्वयः– इह मथुरानाथनगरनवद्वीपकेतुं पश्यसि? (अत्र) दृढगदः गदाधरः सेतुं पाति। इह सः वरदराजः वर्द्धमानः वर्द्धते स्म। अत्र शङ्करः जयदेवः (च) गुरुः इव विरराज।।११९।।

अर्थ– यहाँ मथुरानाथ के नगर-नवद्वीपरूपी केतु (ध्वज) को देख रही हो? यहाँ दृढगदा को धारण करने वाले गदाधर (भट्टाचार्य) सेतु (भवतारक-न्यायविद्या) की रक्षा कर रहे हैं। यहाँ वर्द्धमानाचार्य समृद्ध हुए, यहाँ वरदराज (आचार्य), शङ्कर एवं जयदेव गुरु के समान प्रतिष्ठित होकर शोभित होते थे।।११९।।

(युग्मकम्)

भवानन्द इह बभार तर्कं हरिदासः
रामभद्र इह बभूव रुद्रो विललास।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

बुक्कनृपतिसेनापतिरपि मन्त्री माधवः
मन्त्रविजयविद्याद्यैर्नरपतिरपि साधवः।।१२०।।

पप्रुः प्लुतचित्ता इव यस्य, यस्य निबन्धा-
नद्यापि विलोक्य सन्ति सन्तः स्खलितबन्धाः।
ज्ञापयन्निव माधवो बोधं सः सविग्रहं
रचयति स्म गर्वं भज सर्वदर्शनसंग्रहम्।।१२१।।

अन्वयः—इह भवानन्दः तर्कं बभार। इह हरिदासः रामभद्रः (च) बभूव। (इह) रुद्रः विललास। बुक्कनृपतिसेनापतिः माधवः अपि, मन्त्रविजयविद्याद्यैः नरपतिः अपि विललास। साधवः प्लुतचित्ताः इव यस्य-यस्य निबन्धान् पप्रुः, अद्यापि (तान्) विलोक्य सन्तः स्खलितबन्धाः सन्ति। सः माधवः सविग्रहं बोधं ज्ञापयन् इव सर्वदर्शनसंग्रहं रचयति स्म, (अत एतत्सर्वेषामाचार्याणां वैदुष्ये) गर्वं भज।।१२०-१२१।।

अर्थ— भवानन्द के यहाँ तर्क विद्या को धारण किया था, हरिदास एवं रामभद्र यहीं हुए थे, रुद्र यहीं शोभित हुए थे। बुक्क नामक राजा के सेनापति-माधवनामक मन्त्री तथा मन्त्रणा, विजय एवं विद्या आदि श्रेष्ठ-राजगुणों से वे नरपति (बुक्क) भी यहीं शोभित हुए थे। (परवर्ती) साधु-सज्जन विद्वानों ने मानो प्लुतचित्त (विस्तृत हृदयवाला) होकर जिन-जिन निबन्धों (ग्रन्थों) का पान (मनोयोग से अध्ययन) किया था, आज भी उन ग्रन्थों को देखकर (पढ़ कर) सन्त-जन स्खलितबन्ध (सन्देह-रहित), (भवबन्धन-मुक्त) हो जाते हैं। प्रसिद्ध विद्वान् माधव (माधवाचार्य) ने मानो सविग्रह (मूर्तस्वरूप) ज्ञान कराते हुए सर्वदर्शनसंग्रह नामक ग्रन्थ की रचना की थी। (इन सब अपने पुत्र आचार्यों की विद्वत्ता पर) गर्व करो।।१२०-१२१।।

दर्शनेषु शिरोमणिः पञ्चस्विव पञ्चदशी
पञ्चामृतमिव रचिता शशिनेव च पञ्चदशी।
बुक्कनृपतिनाभ्यर्थितसायनः सुकोविदः
स च चकार वेदभाष्यमथ वृद्ध्यै संविदः।।१२२।।

अन्वयः— (माधवाचार्येण) पञ्चसु दर्शनेषु शिरोमणिः इव, पञ्चामृतमिव,

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

शशिना पञ्चदशी इव च पञ्चदशी रचिता। अथ सः सुकोविदः बुक्कनृपतिना अभ्यर्थितसायनः च संविदः वृद्ध्यै वेदभाष्यं चकार॥१२२॥

अर्थ—माधवाचार्य ने पाँचों दर्शनों में मानो शिरोमणिस्वरूप (सर्वश्रेष्ठ), पञ्चामृत के समान (पवित्र-मधुर) तथा चन्द्रमा के द्वारा पञ्चदशी (पूर्णिमा) के समान (अज्ञानतमोविनाशक) पञ्चदशीनामक ग्रन्थ रचा था। तदनन्तर उच्चकोटि के प्रसिद्ध विद्वान् सायन ने बुक्कनृपति के निवेदन करने पर ज्ञान की वृद्धि के लिये वेदभाष्य किया था॥१२२॥

काव्यत्वविमर्श—पञ्चदशी पद का भिन्न-भिन्न अर्थों में दो बार प्रयोग होने से यमक अलङ्कार है॥१२२॥

हरिवर्मनरेन्द्रमन्त्रिभवदेवः पद्धतिं
वाचस्पतिमिश्रबन्धुरकरोद् विफलोद्धतिम्।
योह्यनन्तवासुदेवमन्दिरं भववारिधिं
तारणेच्छुरिव ततान भुवनेश्वरसन्निधौ॥१२३॥

अन्वयः—वाचस्पतिमिश्रबन्धुः हरिवर्मनरेन्द्रमन्त्रिभवदेवः पद्धतिं विफलोद्धतिम् अकरोत्। यः हि भववारिधौ तारणेच्छुः इव भुवनेश्वरसन्निधौ अनन्तवासुदेवमन्दिरं ततान॥१२३॥

अर्थ—वाचस्पति मिश्र के बन्धु, हरिवर्मा नामक राजा के मन्त्री भवदेव भट्ट ने (सनातन धर्म) की पद्धति (मार्ग-सिद्धान्त) को उद्धतता से रहित किया था। उन्होने मानो भवसागर को पार कराने की इच्छा से भुवनेश्वर नगर के निकट भगवान् अनन्त वासुदेव का मन्दिर बनवाया था॥१२३॥

काव्यत्वविमर्श—भुवनेश्वर नगर के निकट भवदेव द्वारा निर्मापित अनन्तवासुदेव का मन्दिर आज भी प्रतिष्ठित है॥१२३॥

देवगिरिनरेन्द्रमन्त्रिहेमाद्रिः शुशुभे
हेमराशिमिव सुषुवे दिवसे स च सुशुभे।
चतुर्वर्गचिन्तामणिमृषिमतादनूनम्
वोपदेवमुक्ताफलटीकामपि नूनम्॥१२४॥

अन्वयः—देवगिरिनरेन्द्रमन्त्रिहेमाद्रिः शुशुभे, स च सुशुभे दिवसे ऋषिमतात्

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अनूनं, हेमराशिम् इव चतुर्वर्गचिन्तामणिं, वोपदेवमुक्ताफलटीकाम् अपि नूनं सुषुवे।।१२४।।

अर्थ—देवगिरि के राजा के मन्त्री हेमाद्रि यही शोभित हुये थे, उन्होंने शुभ-दिन में ऋषियों के मत से अन्यून (पूर्णतः श्रुतिसमर्थित) चतुर्वर्ग-चिन्तामाणिनामक ग्रन्थ का तथा वोपदेव पर (उनके द्वारा लिखित मुधबोध व्याकरण पर) मुक्ताफलनामक टीका का भी प्रणयन किया था।।१२४।।

वरदातटनिकटे भुवि वोपदेव इहासीत्
नवं स च व्याकरणं मुग्धबोधमकार्षीत्।
कविभिषजस्तस्य जगति पुस्तकानि बहूनि
तेन तेन रक्षितानि रत्नानि च वसूनि।।१२५।।

अन्वयः—इह भुवि वरदातटनिकटे वोपदेवः आसीत्, स च नवं व्याकरणं मुग्धबोधम् अकार्षीत्। कविभिषजः तस्य जगति बहूनि पुस्तकानि रत्नानि वसूनि च तेन तेन रक्षितानि (सन्ति)।।१२५।।

अर्थ—इस भूमि पर ही वरदानदी के तट के निकट आचार्य वोपदेव रहते थे, उन्होंने मुग्घबोध नामक नवीन व्याकरण की रचना की थी। कवि एवं वैद्य अथवा कवियाँ के वैद्य (कवियों के अज्ञानरूपी रोग का निवारण काने वाले) उन वोपदेव के द्वारा उचित पुस्तकों, (संग्रह किये गये) रत्नों एवं धन का संरक्षण परवर्ती अनेक विद्वानों ने किया था। अथवा रत्न एवं धनस्वरूप पुस्तकों का संरक्षण किया था।।१२५।।

स जीमूतवाहनस्तु बहुलविधवृद्धः
विज्ञानेश्वर इह पदमदधात् स समृद्धः।
मेधातिथिरभवदपि च कुल्लूको भट्टः
लिपिभिः किल दीप्तिकृत् भारतगुरुपट्टः।।१२६।।

अन्वयः—सः जीमूतवाहनः तु बहुलविधवृद्धः (धर्मरत्ननामकग्रन्थकर्त्ता आसीत्), सः समृद्धः विज्ञानेश्वरः इह पदम् अधात्। मेधातिथिः (अभवत्) लिपिभिः किल दीप्तिकृत्, भारतगुरुपट्टः कुल्लूकः भट्टः अपि च अभवत्।।१२६।।

अर्थ—यही पर अनेक विधाओं (ज्ञान-बल-सदाचारआदि) में वृद्ध

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

(अग्रगण्य) वह प्रसिद्ध विद्वान् जीभूतवाहन हुये थे। ज्ञान से समृद्ध आचार्य विज्ञानेश्वर ने यहीं चरण रखे थे, या उच्च-पद प्राप्त किया था। मेधातिथि तथा अपनी लिपि (लेखन) से दीप्ति (ज्ञान-प्रकाश) का विस्तार काने वाले, भारत के श्रेष्ठ-पट्ट (पगड़ी) स्वरूप या भालपट्टस्वरूप कुल्लूक भट्ट यहीं हुए थे।१२६।

नन्दनवन-हरिचन्दन-रघुनन्दन-चन्द्रमाः
स्मृतिभ्रान्तिरपससार यस्मादिव साप्यमा।
उपदिदेश दक्षिणदिशि कमलाकरभट्टः
स्मृतिविधानममलहृदयकनकोज्ज्वलपट्टः।।१२७।।

अन्वयः—दक्षिणदिशि अमलहृदयकनकोज्ज्वलपट्टः नन्दनवनहरिचन्दन-रघुनन्दनचन्द्रमाः कमलाकरभट्टः स्मृतिविधानम् (निर्णयसिन्धुनामकं ग्रन्थम्) उपदिदेश, यस्मात् अमा इव स्मृतिभ्रान्तिः अपससार।।१२७।।

अर्थ—दक्षिण दिशा (दक्षिण–भारत) में निर्मल हृदय वाले तथा स्वर्ण के समान देदीप्यमान पट्ट (भाल-पट्ट) से शोभित, कमलाकर भट्ट नामक विद्वान् हुए थे, जो नन्दनवन के हरिचन्दन (देववृक्ष) तथा रघुनन्दन एवं चन्द्रमा स्वरूप थे। जिन्होंने स्मृतिविधान (निर्णसिन्धुनामकग्रन्थ का प्रणयन कर स्मृतियों में व्याख्यात धार्मिक विधानों) का उपदेश दिया था। जिसके ज्ञान-प्रकाश से अमावास्या-रूपिणी स्मृतिग्रन्थों की भ्रान्ति अपसृत (दूर) हो गयी थी।।१२७।।

काव्यत्वविमर्श—कमलाकारभट्ट पर नन्दनवनचन्द्रमादि का आरोप तथा स्मृतिभ्रान्ति पर अमावास्या का आरोप होने से रूपक अलङ्कार है।।१२७।।

मन्वादिमुनीन्द्रवृन्दरचिताः स्मृतिसंहिताः
तेन तेन तासां खलु संग्रहाश्च निर्मिताः।
जैमिनीयमीमांसामवलम्ब्य सुविस्तृतिः
तेषां मुनिवचनानामप्यकारि सुविवृतिः।।१२८।।

अन्वयः—मन्वादिमुनीन्द्रवृन्दरचिताः स्मृतिसंहिताः (प्रसिद्धाः सन्ति), तेन (कललाकरभट्टेन) तासां खलु संग्रहाः च निर्मिताः। (तेन) जैमिनीयमीमांसाम् अवलम्ब्य सुविस्तृतिः तथा (तेषां) मुनिवचनानां सुविवृतिः अपि अकारि।।१२८।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अर्थ–उन्होने (कमलाकर भट्ट ने) मनु आदि मुनियों के वृन्द द्वारा रचित स्मृति–संहिताओं का अनेक उपायों से संग्रह किसा था। उन्होंने जैमिनि–प्रणीत मीमांसा–दर्शन का सुविस्तार एवं उन मुनि-वचनों की सुन्दर विवृत्ति (व्यारव्या) भी की थी॥१२८॥

ज्योतिषि बुधवरवराहमिहिररचितसंहिताः
सन्ति च मतवादास्त्वयि भास्करार्यबृंहिताः।
पाणितलकपालफलकमालोक्य संसुस्मिताः
फलितैरपि कथयन्ति च सर्वं खलु पण्डिताः।।१२९।।

अन्वयः–हे देवि! ज्योतिषि त्वयि बुधवरवराहमिहिररचितसंहिताः, भाष्करार्यबृंहिताः मतवादाः च सन्ति। संसुस्मिताः पण्डिताः पाणितलकपाल-फलकम् अवलोक्य, फलितैः अपि च सर्वं (फलम्) खलु कथयन्ति॥१२९॥

अर्थ–ज्योतिषशास्त्र में तुम को (भारतभूमि को) विषय बना कर विद्वानों में श्रेष्ठ वराहमिहिर द्वारा रचित संहितायें तथा भाष्कराचार्य द्वारा परिवर्द्धित मत-वाद भी उपलब्ध है, जिसके आधार पर ज्योतिषशास्त्र के विद्वान् संसुस्मित होकर (मुस्कुराते हुए, अनायास, खेल-खेल में) करतल (हथेली) एवं कपालफक (ललाट) को देख कर तथा फलित सिद्धान्तों के आधार पर भी सब (भूत-भविष्य-वर्तमान तथा स्वभाव आदि) बता देते हैं॥१२९॥

साक्षात् खलु शङ्करोऽपि हृदानन्दलरीं
निर्माय नुनाव नावमिव भवस्य सुन्दरीम्।
स सौन्दर्यलहर्यापि समतोषयदम्बिकां
स च चकार नागेशस्तन्त्रोज्ज्वलपुस्तिकाम्।।१३०।।

अन्वयः–साक्षात् शङ्कर अपि खलु हृदानन्दलहरीम् (आनन्दलहरीनाम ग्रन्थम्) निर्माय, भवस्य नावम् इव (भवस्य) सुन्दरीं नुनाव। सः सौन्दर्यलहर्या अपि अम्बिकां समतोषयत्। सः नागेशः च तन्त्रोज्ज्वलपुस्तिकां चकार॥१३०॥

अर्थ–साक्षात् शङ्करस्वरूप आद्य शङ्कराचार्य ने भी हृदय में आनन्द की लहरें उत्पन्न करने वाली आनन्दलहरी (ग्रन्थ) का निर्माण करके, भव-सागर

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

पार कराने वाली नौका के सदृश (भव-शिव की) सुन्दरी (भगवती त्रिपुर-सुन्दरी) का स्तवन किया था। उन्होंने सौन्दर्यलहरी (नामक ग्रन्थ के) द्वारा भी अम्बिका को प्रसन्न किया था। उसके आधार पर आचार्य नागेश ने तन्त्रशास्त्र की उज्ज्वल–पुस्तिका का प्रणयन किया था॥१३०॥

काव्यत्वविमर्श–भवसुन्दरी पर भवपारकर्त्रीनाव का आरोप होने से रूपक अलङ्कार है। 'भवस्य' पद का 'सुन्दरीम्' एवं 'नावम्' दोनों से सम्बन्ध स्थापित करने से 'भवस्य' पद में श्लेष अलङ्कार है॥१३०॥

इह कृष्णानन्दरचिततन्त्रसारनामा
ग्रन्थोऽस्ति च यमवलम्ब्य धर्मैः सह कामाः।
अर्था अपि लभ्यन्ते लभ्यते च मुक्तिः
को न विश्वसिति तु तन्त्रमम्ब भगवदुक्तिः॥१३१॥

अन्वयः–इह कृष्णानन्दरचिततन्त्रसारनामा ग्रन्थः अस्ति, यम् अवलम्ब्य च धर्मैः सह कामाः अर्थाः अपि लभ्यन्ते, मुक्तिः च लभ्यते। हे अम्ब! भवदुक्तिः तन्त्रं तु कः न विश्वसिति?॥१३१॥

अर्थ–इसी भूमि पर आचार्य कृष्णानन्द द्वारा विरचित 'तन्त्रसार' नामक ग्रन्थ उपलब्ध है, जिसका अवलम्बन (अध्ययन एवं क्रियान्वयन) करके धर्मों के साथ अर्थ और काम भी प्राप्त होते हैं, तथा मुक्ति भी प्राप्त होती है। हे मातः! आप के द्वारा उक्त (प्रवर्तित), तन्त्रशास्त्र पर कौन विश्वास नहीं करता? अर्थात् सभी सम्प्रदायों के लोग तन्त्रशास्त्र को मानते हैं॥१३१॥

शिवागमस्यैष भाष्यमकरोदुपगुप्तः
तन्मतावलम्बने तु शङ्करो न गुप्तः।
रसायनं वर्त्ततेऽत्र वस्तुशक्तिनिर्णयः
तन्त्रेऽस्ति च विज्ञानं तत्तु चिकित्सालयः॥१३२॥

अन्वयः–एषः उपगुप्तः (आचार्यः) शिवागमस्य भाष्यम् अकरोत्, तन्मतावलम्बने तु शङ्करः (अपि) गुप्तः न। अत्र वस्तुशक्तिनिर्णयः रसायनम् अस्ति, तन्त्रे च विज्ञानम् अस्ति (अतः) तत् तु चिकित्सालयः अस्ति॥१३२॥

अर्थ–प्रसिद्ध उपगुप्तनामक विद्वान् ने शिवागम (शैवागम-दर्शन एवं

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

तन्त्र–विद्या) पर भाष्य किया था, उनके मत का अवलम्बन करने में शङ्कराचार्य जी ने भी सङ्कोच नहीं किया था (अर्थात् वह मत अद्वैतवाद का अविरोधी है)। इस भारतभूमि में वस्तुशक्ति का निर्णय रसायन (औषधि विशेष) स्वरूप है (पदार्थों के गुण-क्रिया-प्रभाव आदि का ज्ञान भवव्याधि ग्रस्त लोगों के लिये रसायन-स्वरूप है) तथा तन्त्रशास्त्र विज्ञान (विशिष्ट-ज्ञान) है, अतः वह तो चिकित्सालय स्वरूप है॥१३२॥

काव्यत्वविमर्श–वस्तुशक्तिनिर्णय पर रसायन का तथा तन्त्रविज्ञान पर चिकित्सालय का आरोप होने से रूपक अलङ्कार है॥१३२॥

धनुर्वेद इव धरणावायुषोऽपि वेदः
तान्त्रिकमतचिकित्साश्च सन्ति किमिह खेदः?
काशीपतिरासीदिह दिवोदासभूपः
स एव सति धन्वन्तरिरस्यामृतकूपः॥१३३॥

अन्वयः–धरणौ धनुर्वेदः इव आयुषः वेदः (आयुर्वेदः) अपि (अस्ति), तान्त्रिकमतचिकित्साः च सन्ति, (अतः) इह खेदः किम्?। इह दिवोदासभूपः काशीपतिः आसीत्। हे सति! सः एव धन्वन्तरिः आसीत्, अस्य अमृतकूपः (अपि) आसीत्॥१३३॥

अर्थ–इस धरणी पर धनुर्वेद के समान आयुष का वेद (आयुर्वेद) भी है, तथा तान्त्रिकमत की चिकित्सा-पद्धतियाँ भी हैं, इसलिये खेद किस बात का है? (अनेक चिकित्सा पद्धतियाँ होने के कारण तुम्हारे पुत्र (भारतवासी) रोग-मुक्त रहेंगे, अतः हे मातः तुम्हें खेद नहीं करना चाहिये)। यहाँ दिवोदास नामक राजा काशी नगरी के स्वामी थे। हे सति! वे ही (काशीराज्य के) धन्वन्तरि (तत्स्वरूप) थे। उनका यहाँ एक अमृतकूप था। (आश्रमस्थं काशिराजं दिवोदासं धन्वन्तरिम्-सुश्रुतसंहिता-१-१)॥१३३॥

सुश्रुतचरकोच्चदानमद्यापि च विद्यते
कति कति सति पुस्तकानि भिषजामपि चासते।
चक्रपाणिदत्तेन च गौडेश्वररसना-
ध्यक्षेण विवक्षुणास्ति मुष्टियोगरचना॥१३४॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अन्वयः—हे सति! सुश्रुतचरकोच्चदानं च अद्यापि विद्यते, भिषजाम् अपि कति-कति पुस्तकानि च आसते। गौडेश्वररसनाध्यक्षेण विवक्षुणा चक्रपाणिदत्तेन मुष्टियोगरचना (कृता) अस्ति॥१३४॥

अर्थ—आचार्य सुश्रुत एवं चरक के उच्चदान (उनके द्वारा प्रणीत संहितायें) आज भी सुरक्षित हैं। हे सति! वैद्यों की (वैद्यों द्वारा विरचित) कितनी-कितनी पुस्तकें भी यहाँ (प्रसिद्ध-उपलब्ध) हैं। गौडेश्वर के रसनाध्यक्ष, सदा विवक्षु रहने वाले, चक्रपाणिदत्त के द्वारा रचित 'मुष्टियोगरचना' नामक ग्रन्थ उपलब्ध है॥१३४॥

माधवकरनिदानन्तु वैद्यकविधिसेवी
को न वेत्ति वद वद भुवि वसुधेश्वरि देवि!
रामचरितकाव्यस्य च सन्ध्याकरनन्दी
वैद्यः किल रचयिता स गौडेश्वरवन्दी॥१३५॥

अन्वयः—हे वसुधेश्वरि! देवि! वद-वद कः वैद्यकविधिसेवी भुवि माधवकरनिदानं तु न वेत्ति। रामचरितकाव्यस्य रचयिता च सः गौडेश्वरवन्दी सन्ध्याकरनन्दी किल वैद्यः (आसीत्)॥१३५॥

अर्थ—हे वसुधेश्वरि! हे देवि! बोलो-बोलो इस भूमि पर कौन ऐसा वैद्यकविधि का सेवक (आयुर्वेद का ज्ञाता) है, जो माधवकरनिदान (माधवनिदान नामक प्रसिद्ध वैद्यकग्रन्थ) को नहीं जानता। गौडेश्वर (गौडदेशीय राजा रामपाल) के वन्दी (वन्दना करने वाले-स्तुतिकर्त्ता, उनके सभापण्डित) सन्ध्याकरनन्दी नामक विद्वान भी वैद्य ही थे। उन्होंने रामचरितकाव्य (रामपाल-चरितम् नामक काव्य) की रचना की थी। (इस काव्य के इसके श्लिष्ट पद्य राजा रामपाल एवं भगवान् रामचन्द्र जी के चरित्र को अभिहित करते हैं)॥१३५॥

गौडेश्वरकरुणयैव कविजुम्मरनन्दी
स वरेन्द्रीपतिरभवत् सुतरामद्वन्द्वी।
स संक्षिप्तसारस्य च वृत्तिं विततान
वर्णादपि कृत्या जन इहोदीर्णमानः॥१३६॥

अन्वयः—गौडेश्वरकरुणया एव सुतराम् अद्वन्द्वी, सः कविजुम्मरनन्दी

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

वरेन्द्रीपतिः अभवत्। स च संक्षिप्तसारस्य (एतन्नामकस्य आचार्य क्रमदीश्वर-लिखितस्य ग्रन्थस्य) वृत्तिं (रसवतीनामटीकां) वितताना इह जने उदीर्णमानः सः वर्णात् अपि कृत्याः (कृत्यप्रत्ययाः भवन्तीति निरणैषीत्)॥१३६॥

अर्थ—गौडदेश के राजा की कृपा से ही, पूर्णतः द्वन्द्वरहित (द्वेषादि दुर्गुणों से रहित) प्रसिद्ध कवि जुम्मर नन्दी वरेन्द्री के स्वामी बने थे (पद्य में कवि द्वारा प्रयुक्त 'वरेन्द्री' शब्द का विवक्षित अर्थ स्पष्ट नहीं है)। उन्होंने 'संक्षिप्तसार' (आचार्य क्रमदीश्वर द्वारा लिखित पाणिनीय-व्याकरण-सम्बन्धी ग्रन्थ) नामक ग्रन्थ की वृत्ति (रसवती-नामक-टीका) लिखी थी। प्रजाजन में परम सम्मानित कवि जुम्मरनन्दी ने वर्णों (अक्षरों) से भी कृत्य-प्रत्ययों का विधान किया था॥१३६॥

अमरु-भर्तृहरि-मुरारि-चौरकविमयूराः
सुबन्धुः स भवभूतिः कवितारसपूराः।
भास-दण्डि-शूद्रक-नृपसुतविशाखदत्ताः
धावकोऽपि भारविरपि माघो रसमत्ताः।।१३७।।

अन्वयः—अमरु-भर्तृहरि-मुरारि-चौरकविमयूराः, सुबन्धुः, सः भवभूतिः (इत्यादयः सर्वेऽपि कवयः) कवितारसपूराः (आसान्)। भास-दण्डि-शूद्रक-नृपसुतविशाखदत्ताः, धावकः अपि, भारविः, अपिः माघः अपि (इत्यादयः कवयः) रसमत्ताः आसन्॥१३७॥

अर्थ—अमरु, भर्तृहरि, मुरारि, चौरकवि (विल्हण), मयूर, सुबन्धु एवं प्रसिद्ध कवि भवभूति आदि समस्त संस्कृत कवि कविता-रस के साक्षात् प्रवाहस्वरूप ही थे। भास, दण्डी, शूद्रक, राजा के पुत्र विशाखदत्त तथा धावक भी, भारवि भी और माघ भी रसमत्त (काव्यरसास्वदन से अलौकिकानन्द में मग्न) थे॥१३७॥

भट्टि-भट्टनारायण-घटकर्पर-कवयः
गिरमुपास्य लयमनयन् ननु निज निज सुवयः।
कति कति सति कवयस्तव तेषां किमु गणना
भवति भवति! कथमसि मसिवर्णा ननु विमनाः।१३८।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अन्वयः—भट्टि-भट्टनारायण-घटकर्परकवयः ननु गिरम् उपास्य निज-निज सुवयः लयम् अनयन्। हे सति! तव कति-कति कवयः (सुपुत्राः बभूवुः) किमु तेषां गणना भवति? ननु विमनाः मसिवर्णा कथम् असि?॥१३८॥

अर्थ—भट्टि, भट्टनारायण, घटकर्पर आदि कवियों ने वाणी (कविभारती) की उपासना करते हुए ही अपनी-अपनी आयु व्यतीत की थी। ऐसे ही कितने-कितने तुम्हारे कविरूपी पुत्र यहाँ उत्पन्न हुए, क्या उनकी गणना हो सकती है? (अर्थात् नहीं)। हे भारतभूमे! आप फिर भी (उक्त असंख्य महाकवियों की माता होकर भी) दुःखित एवं मसिवर्णा (शोक से स्याही के समान काले वर्ण की) क्यों हो रही हो?॥१३८॥

न्यरूपयद् भरतो मुनिरिह रूपकरूपं
स्वात्मानं सागरं न वेत्सि वेत्सि कूपम्?
तन्वते न भोजराज-दण्डि-मम्मटभट्टाः
श्रेणीकृतविशदीकृतसुविपुलरसघट्टाः॥१३९॥

अन्वयः—इह भरतः मुनिः रूपकरूपं न्यरूपयत्, (तथापि त्वम्) स्वात्मानं सागरं न वोत्सि (प्रत्युत) कूपं वेत्सि! भोजराजदण्डिमम्मटभट्टाः श्रेणीकृतविशदीकृत-सुविपुलरसघट्टाः (तव कीर्तिं) न तन्वते?॥१३९॥

अर्थ—हे देवि! यहीं पर भरतमुनि ने रूपकों के रूप (लक्षण-स्वरूप-प्रयोगविधि आदि) का निरूपण किया था, तथापि तुम अपने-आप को सागर नहीं, प्रत्युत कूप समझ रहीं हो? (भरतमुनि प्रणीत विद्या-कला एवं शिल्प का सागर नाट्यशास्त्र नामक ग्रन्थ तुमको उपलब्ध है, अतः तुम स्वयं को सागर मानो कूप नहीं। स्वयं को कूप मानना ही तुम्हारी खिन्नता का कारण है। तुम ज्ञानियों एवं कवियों का सागर ही हो)। क्या भोजराज, दण्डी, मम्मट भट्ट आदि आचार्य, सुविस्तृत रस के घाटों (काव्यानन्द-व्याख्यापक- ग्रन्थों) को श्रेणीबद्ध एवं विशद (स्वच्छ, लक्षणों को परिष्कृत) करके तुम्हारी कीर्ति का विस्तार नहीं कर रहे हैं?॥१३९॥

काव्यत्वविमर्श—'स्वात्मानं सागरं न वेत्सि वेत्सि कूपम्' इस उक्ति में अप्रस्तुतप्रशंसा अलङ्कार है। "स्वयं को ज्ञानी-पुत्रों से पूर्णतः समृद्ध मानो हीन नहीं" इस प्रस्तुत कथन के लिये कवि ने उक्त अप्रस्तुत का विधान किया है।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

विश्वनाथजगन्नाथमुखकृतिनो विचेरुः
तत्र तत्र किमपि किमपि नवं नवं वितेरुः।
पिङ्गलमुनिरिङ्गितेन स हि भुजङ्गराजः
गङ्गाम्बुतरङ्गमिवावलत कविसमाजः।।१४०।।

अन्वयः–(इह) विश्वनाथजगन्नाथमुखकृतिनः विचेरुः ये तत्र-तत्र किमपि-किमपि नवं-नवं वितेरुः। सः भुजङ्गराजः हि पिङ्गलमुनिः (आसीत्), (यस्य) इङ्गितेन कविसमाजः गङ्गाम्बुतरङ्गम् इव अवलत।।१४०।।

अर्थ–यहाँ विश्वनाथ, (साहित्यदर्पणकार) जगन्नाथ (रसगङ्गाधरकर्त्ता) आदि प्रमुख विद्वान् कवि विचरण करते थे। इन्हें काव्यशास्त्र के विभिन्न स्थलों पर कुछ नये-नये विचारों का वितरण (स्थापन) किया था। वह भुजङ्गराज पिङ्गलमुनि ही हुए थे, जिनके इङ्गित (इशारे) से कविसमाज गङ्गाजल की तरङ्गों की तरह वलित (सञ्चालित) होता था। (पिङ्गलमुनि द्वारा निर्धारित छन्दोलक्षणों का अनुपालन करते हुए कविसमाज काव्यप्रणयन करता था)।।१४०।।

काव्यत्वविमर्श–कवि समाज का सादृश्य गङ्गातरङ्ग से वर्णित है, अतः उपमा अलङ्कार है।।१४०।।

(युग्मकम्)

छन्दो निबबन्ध बन्धुरिव कविजयदेवः
नवं नवं छन्दोऽसृजदरुणं सवितेव।
तुम्बरुरपि रम्भोरुरम्ब सत्यभामा
कलकोकिलकण्ठी किल पतिप्रीतिकामा।।१४१।।

स्वरलहरीमुदपादयदमृतसिन्धुधारां
नारदोऽपि गायति स्म वीणयत्युदाराम्।
उद्गिरन्ति गायनास्तु गीतिं मधुमधुरा-
मद्यापि तु वादकाश्च वादयन्त्यविधुराः।।१४२।।

अन्वयः–बन्धुः इव (प्रियः) कविजयदेवः (न केवलं) छन्दः निबबन्ध,

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

(अपि तु) सविता अरुणम् इव नवं नवं छन्दः असृजत्। हे अम्ब! तुम्बुरुः अपि, कलकोकिलकण्ठी पतिप्रीतिकामा रम्भोरुः सत्यभामा (अपि) किल अमृतसिन्धुधारां स्वरलहरीमुदम् अपाययत्। नारदः अपि गायति स्म, उदारां (गीतिं च) वीणयति स्म। अद्यापि गायनाः तु मधुमधुरां गीतिम् उद्गिरन्ति, अविधुराः वादकाः च (वाद्यानि) वादयन्ति॥१४१-१४२॥

अर्थ—बन्धुसदृश (विद्वज्जनप्रिय) कवि जयदेव ने न केवल छन्दोग्रन्थ का प्रणयन किया था, अपि तु नये-नये छन्दों का सृजन वैसे ही किया था जैसे भगवान् सूर्य अरुण (अपने अरुण नामक सारथि) का सृजन करते हैं। हे अम्ब! तुम्बुरु (गान्धर्व विद्या के आचार्य) ने तथा रम्भोरु (कदलीस्तम्भ के सदृश ऊरुओं वाली), कोकिल के समान मनोहर कण्ठ वाली तथा पति की प्रीति की कामना वाली सत्यभामा (भगवान् कृष्ण की पत्नी) ने अमृतसिन्धु की धारास्वरूपिणी अपनी स्वर-लहरी के आनन्द का पान कराया था। मुनि नारद भी गाते थे और वीणा में मनोहर गीति भी बजाते थे। आज भी अनेक गायक मधु के समान मधुर गीतियाँ गा रहे हैं और श्रेष्ठ वादक (वाद्य भी) बजा रहे हैं॥१४१-१४२॥

बोद्धुं तव तनयानां रूपं नयनानि
नार्हन्ति श्रवणान्ययि गीतानि च तानि।
ऋषिररचयदुरसि साध्वि कलापीह सूत्रम्
वितस्तार पाणिनिरपि यदवलम्ब्य तन्त्रम्॥१४३॥

अन्वयः—अयि! तव (उक्तानां विविधविद्याकलादक्षाणाम्) तनयानां रूपं बोद्धुं नयनानि न अर्हन्ति, तानि गीतानि च बोद्धुं (श्रोतुं) श्रवणानि न अर्हन्ति। हे साध्वि! इह (तव) उरसि कलापी ऋषिः सूत्रम् अरचयत्, यत् अवलम्ब्य पाणिनिः अपि तन्त्रं वितस्तार॥१४३॥

अर्थ—हे मातः! तुम्हारे उक्त (विविध विद्याओं एवं कलाओं में दक्ष) पुत्रों के रूप (पाण्डित्य-कला कौशल आदि) को जानने (देखने) में नयन समर्थ नहीं है, तथा उनके गीतों को सुनने में श्रोत्र भी समर्थ नहीं है। हे साध्वि! तुम्हारे इस वक्षःस्थल पर कलापी ऋषि ने सूत्रों की रचना की थी, जिनका आश्रय लेकर महर्षि पाणिनि ने भी तन्त्र (व्याकरण-शास्त्र) का विस्तार किया था (अष्टाध्यायी नामक व्याकरण के ग्रन्थ का प्रणयन किया था)॥१४३॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

कलापस्य कृतौ येन रचिताः खलु तेने-
क्षावता च कात्यायनमुनिना सांतं तेने।
वार्त्तिकन्तु भाष्यमस्य पतञ्जलिश्चकार
तन्मुनित्रयमवनीश्वरि भारतमधिचकार।।१४४।।

अन्वयः—हे सति! येन खलु कलापस्य कृतौ (अष्टाध्यायी) रचिता, तेन इच्छावता कात्यायनमुनिना च वार्तिकं तेने। अस्य भाष्यं तु पतञ्जलिः चकार, (इत्थम्) हे अवनीश्वरि! तत् मुनित्रयं भारतम् अधिचकार।।१४४।।

अर्थ—हे सति! कलाप की कृति (कलाप-व्याकरण) के आधार पर जो पाणिनि ने (अष्टाध्यायी) रची थी, उन पर महाशय कात्यायनमुनि ने वार्तिकों का विस्तार किया था। इसका (सूत्र-वार्तिकका) भाष्य महर्षि पतञ्जलि ने किया था, इस प्रकार हे अवनीश्वरि! इन तीनों मुनियों ने भारतभूमि को अधिकृत (अलङ्कृत) किया था।।१४४।।

निरमादिह वामनस्तु पाणिनीयवृत्तिं
कलापस्य कात्यायनवृत्तेः परिवृत्तिम्।
अमरसिंहतोऽनन्यः स खलु दुर्गसिंहः
व्यरचयच्च सौगतः स सोऽपि पुरुषसिंहः।।१४५।।

अन्वयः—इह वामनः तु पाणिनीयवृत्तिं (काशिकाम्) निरमात्, (तत्र) कलापस्य कात्यायनवृत्तेः परिवृत्तिम् (अपि चकार)। अमरसिंहतः अनन्यः सः खलु दुर्गसिंहः, स च सौगतः, सः पुरुषसिंहः अपि (अमरकोशम्) व्यरचयत्।।१४५।।

अर्थ—यहाँ आचार्य वामन ने पाणिनीय-सूत्रों पर वृत्ति (काशिका-वृत्ति) का निर्माण किया था तथा कलाप पर की गयी कात्यायनवृत्ति में परिवृत्ति (परिष्कार) भी किया था। अमरसिंह से अभिन्न दुर्गसिंह, जो कि सौगत (बौद्ध) थे एवं पुरुषसिंह के नाम से भी जाने जाते थे, उन्होंने अमरकोश नामक ग्रन्थ की रचना की थी।।१४५।।

अव्यते स्म माधवेन वामनः स सौगतः
दुर्गोऽपि स तेन वेदविदापि समपूज्यत।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

प्रणिनाय स भट्टोजीरुपकृतये कवीनां
पाणिनीयसूत्राणां वृत्तिं किल नवीनाम्।।१४६।।

अन्वयः—माधवेन सः वामनः अव्यते स्म, तेन वेदविदा अपि सः दुर्गः सौगतः अपि समपूज्यत। सः भट्टोजीः कवीनाम् उपकृतये किल पाणिनीयसूत्राणां नवीनां वृत्तिं प्रणिनाय।।१४६।।

अर्थ—आचार्य माधव ने विद्वान् वामन की रक्षा की थी (उनके मत का समर्थन किया था)। वे वेदवित् (वैदिक मतावलम्बी) होते हुए भी दुर्ग (दुर्गासिंह-अमरसिंह) बौद्ध विद्वान् का सम्मान करते थे। प्रसिद्ध विद्वान् भट्टोजी (दीक्षित) ने कवियों के उपकार के लिये (कवियों को सरलता से शब्दशास्त्र का ज्ञान कराने के लिये) पाणिनीय सूत्रों की नवीनवृत्ति (सिद्धान्तकौमुदी) का प्रणयन किया था।।१४६।।

श्रेणीं तिङ्कृत्तद्धितनाम्नामपि च सन्धे-
रुद्धार स श्रीपतिमतमपि निजनिबन्धे।
एवमेव बहवस्तु ग्रन्थास्तव तनयैः
रचिताः सति का गणना तेषामपि सुनयैः।।१४७।।

अन्वयः—सः (भट्टोजिः) निजनिबन्धे तिङ्कृत्तद्धितनाम्नाम् अपि, सन्धेः च श्रेणीं (चकार), श्रीपतिमतम् अपि उद्धार। हे सति! एवम् एव सुनयैः तव तनयैः बहवः ग्रन्थाः रचिताः, तेषाम् अपि का गणना?।।१४७।।

अर्थ—उन्होंने (भट्टोजीदीक्षित ने) अपने निबन्ध (सिद्धान्तकौमुदी) में तिङ् -कृत्-तद्धित एवं नाम (प्रातिपदिक) शब्दों को श्रेणीबद्ध करने के साथ श्रीपति के मत का उद्धार भी किया था। हे सति! सुन्दर नीति के पालक तुम्हारे पुत्रों ने ऐसे ही (पूर्वोक्त ग्रन्थों के सदृश) बहुत से ग्रन्थ रचे हैं, उनकी गणना कैसे हो सकती है? (ज्ञाताज्ञात होने के कारण यथार्थ गणना नहीं की जा सकती)।।१४७।।

उरस उपरि गगने तव नन्दनाः सह कान्तया
समारुह्य विमानानि सस्मितमुखचन्द्रया।
तडिज्जडितजलधरपथमुद्भिद्य सपुलकां
सुखमवेक्ष्य युवतिं ययुरनिलोल्लसदलकाम्।।१४८।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अन्वयः–तव उरसः उपरि गगने (तव) नन्दनाः सस्मितमुखचन्द्रया कान्तया सह विमानानि समारुह्य तडिज्जटितजलधरपथम् उद्भिद्य सपुलकाम् अनिलोल्लसदलकां युवतिं सुखम् अवेक्ष्य ययुः।।१४८।।

अर्थ–तुम्हारे वक्षःस्थल के ऊपर (भारतवसुन्धरा के ऊपर) आकाश में तुम्हारे ये सभी पुत्र (देहत्याग के बाद) स्मित से शोभित मुखचन्द्र वाली अपनी कान्ताओं के साथ (वस्तुतः अप्सराओं के साथ) विमानों पर आरूढ होकर, विद्युत् से जटित (युक्त) जलधरों (मेघों) के मार्ग का उद्भेदन करके, रोमाञ्च युक्त, पवन के झोकों से फहराते केशोंवाली युवतियों का सुखपूर्वक अवलोकन करते हुए (ऊर्ध्वलोकों को) गये।।१४८।।

विविधस्थापत्यादिकलासम्पद्वर्णनम्–

स्थापत्येऽपि च वसुधे! मयदानवदानं
यौधिष्ठिरसभाभवनमस्य त्ववदानम्।
के ब्रुवन्ति नासीदिह साध्वि तद्धि कर्म
प्राचामवगच्छ हर्म्यमर्म गच्छ शर्म।।१४९।।

अन्वयः–हे वसुधे स्थापत्ये अपि भयदानवदानम् (अपूर्वमासीत्), अस्य अवदानं तु यौधिष्ठिरसभाभवनं (बभूव)। हे साध्वि! के ब्रुवन्ति (यत्) "इह हि तत् कर्म नासीत्।" प्राचां हर्म्यमर्म अवगच्छ, शर्म (च) गच्छ।।१४९।।

विविध स्थापत्यादिकलासम्पत्ति का वर्णन–

अर्थ–हे वसुधे! स्थापत्य (कला एवं विद्या) में भी मयदानव का दान (योगदान) अपूर्व था, महाराज युधिष्ठिर का सभा–भवन उसी का अवदान था (उसे मयमदानव ने ही बनाया था।) हे सध्वि! कौन कहता है कि- यहाँ (भारत भूमि पर) वह कर्म (स्थापत्य कला में दक्षता) नहीं थी? प्राचीन शिल्पियों के हर्म्यमर्म (श्रेष्ठ सुन्दर भवनों के निर्माण के रहस्य) को जानो और आनन्दित होओ।।१४९।।

उत्कलभुवि कलिङ्गेषु दक्षिणदिशि बहुधा
कति हरिहरगौरीरविमठाः सन्ति किं मुधा?
कति शरदोऽतीत्य ते तु तव वक्षसि संस्थिताः
यूरोपनिवासिनोऽपि वीक्ष्य सन्ति विस्मिताः।।१५०।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अन्वयः—उत्कलभुवि, कलिङ्गेषु, बहुधा (च) दक्षिणदिशि कति हरिहर-गौरीरविमठाः सन्ति, (ते) किं मुधा? ते तु कति शरदः अतीत्य तव वक्षसि संस्थिताः (सन्ति)। (यान्) वीक्ष्य यूरोपनिवासिनः अपि विस्मिताः सन्ति।।१५०।।

अर्थ—उत्कल देश की भूमि पर, कलिङ्गदेश में एवं बहुतया दक्षिण दिशा में (दक्षिण के प्रदेशों में) कितने ही विष्णु, शिव, गौरी एवं सूर्य के मन्दिर आज भी सुशोभित हैं। क्य वे सब मिथ्या हैं? (तुम्हारा गौरव नहीं बढा रहे हैं? अर्थात् अवश्य बढ़ा रहे हैं)। वे कितने वर्षों से तुम्हारे वक्षःस्थल (भारतभूमि) पर संस्थित हैं। उन्हें देख कर यूरोप महाद्वीप के निवासी भी विस्मित हो जाते हैं।।१५०।।

गिरिकृत्रिमकन्दरेषु मन्दिराणि सुन्दरा-
ण्यन्धकारमुक्तानि च भान्ति सन्ति कन्धराः।
कान्तिमन्ति चित्राणि च सूक्ष्माणि च लसन्ति
के नु वीक्ष्य तानि तानि नासीदिति वदन्ति।।१५१।।

अन्वयः—गिरिकृत्रिमकन्दरेषु सुन्दराणि अन्धकारमुक्तानि च मन्दिराणि भान्ति, (तानि तव) कन्धराः सन्ति। (तेषु) कान्तिमन्ति च सूक्ष्माणि च चित्राणि लसन्ति। तानि तानि वीक्ष्य, के नु "(स्थापत्यचित्रनिर्माणकौशलम् अत्र) न आसीत्" इति वदन्ति?।।१५१।।

अर्थ—पर्वतों के कृत्रिम (मानव निर्मित) कन्दरों (गुफाओं) में सुन्दर, अन्धकार से रहित, मन्दिर आज भी शोभायमान हैं। वे सब मन्दिर तुम्हारी कन्धरायें (ग्रीवायें) हैं। वे कान्तिमान सूक्ष्म चित्रों से शोभित हैं। इन सबको देख कर कौन कह सकता है कि ये (शिल्प और कलाओं के निर्माण की कुशलता) यहाँ नहीं थीं? अर्थात् कोई नहीं। (इन्हें देख कर सभी ये मानने को बाध्य हैं कि भारत वर्ष में अतिप्राचीन काल से ही सभी विद्यायें, कलायें एवं शिल्प प्रतिष्ठित थे।।१५१।।

काव्यत्वविमर्श—मन्दिरों पर वसुन्धरा के कन्धरों का आरोप होने से रूपक अलङ्कार है, यहाँ कवि ने अजन्ता-एलोरा की गुफाओं का संकेत किया है।

लेखेति च देवनाम वीक्ष्य मनसि मन्यते
सुचिरमत्र देवचित्रमत्र भवति पूज्यते।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

श्रव्यकाव्यदृश्यकाव्यपुराणेषु दृश्यते
रमणो कमनीयपाणिकमलैः स्म विलिख्यते।।१५२।।

अन्वयः—भवति! 'लेख' इति देवनाम वीक्ष्य च मनसि मन्यते (यत्) अत्र सुचिरं (सुचिरात्) देवचित्रं पूज्यते (स्म)। श्रव्यकाव्यदृश्यकाव्यपुराणेषु दृश्यते (यदत्र अङ्गनाभिः) कमनीयपाणिकमलैः रमणः विलिख्यते स्म।।१५२।।

अर्थ—हे देवि! देवों के अनेक नामों में एक सामान्य नाम 'लेख' भी है (लेखा अदितिनन्दनाः)। इस लेखनाम की- 'लिख्यन्ते चित्रादौ ये ते लेखाः-' इस व्युत्पत्ति के अनुसार यह माना जाता है कि-यहाँ अतिप्राचीन काल से देवचित्रों का निर्माण और पूजन होता आ रहा है (प्राचीन काल से ही यहाँ चित्रलेखन की परम्परा है)। इसके अतिरिक्त श्रव्यकाव्यों, दृश्यकाव्यों एवं पुराणों में भी यह दिखायी देता है (वहाँ किये गये वर्णनों से ज्ञात होता है) कि, यहाँ अङ्गनायें मनोहर पाणिकमलों (कमल के समान कोमल-हाँथों) से अपने रमणों (प्रियों) का चित्र बनातीं थीं।।१५२।।

अद्यापि च पीठकुम्भकलशेषु सुयोषितः
सति लिखन्ति सुचित्राणि तेन स भुवि भूषितः।
मृदुलचपलपाणिकमललिखितमङ्गनानां
चित्रफलकमस्ति भित्तिलग्नं सुजनानाम्।।१५३।।

अन्वयः—हे सति! अद्यापि च सुयोषितः पीठकुम्भकलशेषु सुचित्राणि लिखन्ति, तेन भुवि सः भूषितः (भवति)। अङ्गनानां मृदुचपलपाणिकमललिखितं सुजनानां चित्रफलकं भित्तिलग्नम् अस्ति।।१५३।।

अर्थ—हे सति! आज भी सुन्दर ललनायें पीठों (यज्ञ की वेदियों) पर स्थापित किये जाने वाले घटों-कलशों पर सुन्दर चित्रों का लेखन (चित्रण) करतीं हैं। वह कलश वहाँ उसी से अलङ्कृत होता है। अङ्गनाओं के कोमल, चञ्चल हाँथरूपी कमलों से निर्मित श्रेष्ठजनों (महापुरुषों) के चित्र आज भी भित्तिलग्न (दीवालों पर टँगे हुए) दिखायी देते हैं।।१५३।।

कम्पितकरचम्पककलिकाङ्गुलिकुलनिःसृतैः
साम्प्रतमपि वर्णचूर्णनिवहैर्निजनिर्मितैः।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

लिखति कम्बलासनस्य चित्रं चतुराङ्गना
लज्जन्ते समुपविश्य यत्र पूजिता जनाः।।१५४।।

अन्वयः—साम्प्रतम् अपि चतुराङ्गना निजनिर्मितैः कम्पितकरचम्पक-कलिकाङ्गुलिकुलनिःसृतैः वर्णचूर्णनिवहैः कम्बलासनस्य चित्रं लिखति, यत्र समुपविश्य पूजिताः जनाः लज्जन्ते॥१५४॥

अर्थ—आज भी चतुर अङ्गनायें कम्पित (गतिमान-चञ्चल) हाँथों की चम्पक की कलिका के समान (गौर-मनोहर) अंगुलियों से निःसृत (निर्गत), स्वनिर्मित नाना रंगों के चूर्णों द्वारा कम्बलासन (कामदेव) का चित्र बनाती हैं। (वह चित्र ऐसा नातिश्लील होता है कि) सज्जन लोग वहाँ बैठकर देखने में लज्जित होते हैं॥१५४॥

काव्यत्वविमर्श—'चम्पककलिकाङ्गुलि' पद में वाचकधर्मलुप्तोपमा अलङ्कार है। कम्बलासन पद का अर्थ ज्ञात नहीं हो सका, प्रसंगतः कामदेव अर्थ किया गया है॥१५४॥

आलिम्पन्त्यङ्गनानि रङ्गै रुचिराङ्गनाः
रजनि रजनि यैरवनिः स्फुरज्ज्योतिरिङ्गणा।
एलात्वक्कृतसम्पुटनवगुणमुपनीतं
दृश्यते न नारीजनपाणिनोपनीतम्।।१५५।।

अन्वयः—(अद्यापि) रुचिराङ्गनाः रङ्गै अङ्गनानि आलिम्पन्ति, यैः अवनिः रजनिः (च) स्फुरज्ज्योतिरिङ्गणा अजनि। नारीजनपाणिना उपनीतम् एलात्वक्कृत-सम्पुटनवगुणम् उपनीतं न दृश्यते?॥१५५॥

अर्थ—आज भी सुन्दर अङ्गनायें विविध रङ्गों से आँगनों को लीपतीं है (रंगोलियों से सजाती) हैं, जिससे प्रत्येक रात्रि एवं भूमि स्फुरित होती हुयी जग-मग–ज्योति से शोभित होती है। नारी-जनों के हाथों से निर्मित, इलायची के छिलके के सम्पुट में समा जाने वाला, नौ धागों का उपनीत (यज्ञोपवीत-जनेऊ) क्या दृष्टिगोचर नहीं होता है? अर्थात् होता है। (इतने सूक्ष्म-पतले धागों का यज्ञोपवीत अपने हाथों से बनाने वाली चतुर महिलायें आज भी हैं)।

मृन्मयीभिरुपलचारुदारूज्ज्वलमूर्त्तिभिः
धातुघटितमूर्तिभिश्च मुखनयनस्फूर्त्तिभिः।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

प्राचामपि नवानाञ्च निर्मिताभिराभिः
क्षोदिताभिरपि धरणिर्व्याप्ता तव मा भीः।।१५६।।

अन्वयः—मुखनयनस्फूर्तिभिः मृण्मयीभिः उपलचारुदारूज्ज्वलमूर्तिभिः धातुघटितमूर्तिभिः च, प्राचाम् अपि नवानां च (महापुरुषाणां) निर्मिताभिः आभिः क्षोदिताभिः अपि तव धरणिः व्याप्ता, भीः मा (कुरु)॥१५६॥

अर्थ—मुख एवं नेत्रों की स्फुट अभिव्यक्ति युक्त, मिट्टी की, पत्थर तथा सुन्दर लकड़ियों की उज्ज्वल मूर्तियों से तथा अनेक धातुओं से ढालीं गयीं प्राचीन तथा नवीन महापुरुषों की इन मूर्तियों से, तथा जो क्षोदित (तोड़ दी गयीं हैं) हैं,ऐसी मूर्तियों से भी तुम्हारी भूमि व्याप्त है, अतः (हे भारतवसुन्धरे) तुम डरो मत (मूर्तिकला के लुप्त होने की भीति मत करो)॥१५६॥

दृषदिष्टककाष्ठेषु च विविधधातुपात्रे
स्वर्णरजतलेपः किल विमलसौधगात्रे।
तवाद्यापि दीयतेऽत्र शिल्पिभिरपि सूनुभिः
तानि जननि दृश्यन्ते प्रोज्ज्वलन्ति भानुभिः।।१५७।।

अन्वयः—जननि! अत्र अद्यापि तव सूनुभिः शिल्पिभिः दृषदिष्टककाष्ठेषु विविधधातुपात्रे विमलसौधगात्रे च किल स्वर्णरजतलेपः दीयते, तानि भानुभिः प्रोज्ज्वलन्ति दृश्यन्ते॥१५७॥

अर्थ—हे जननि! आज भी यहाँ तुम्हारे पुत्रस्वरूप शिल्पियों द्वारा पत्थरों-ईटों-काष्ठों पर, विविध प्रकारके धातुओं के पात्रों (वर्तनों) पर तथा विमलभवनों की दीवारों पर सोने एवं चाँदी का लेप किया जा रहा है। ये सब स्वर्ण-रजतलिप्त पदार्थ (सूर्य-चन्द्र की) किरणों के पड़ने पर देदीप्यमान दिखायी देते हैं॥१५७॥

ढक्कापुरतन्तुवायनिर्मितमतिमृदुलम्
दीर्घदैर्ध्यपरिणाहं मुष्टिमेयमतुलम्।
शाद्वलेऽद्य पातितं तदंशुकमपि विपुलं
श्वस्तदम्ब को द्रक्ष्यति नेष्यति तुहिनाकुलम्।।१५८।।

अन्वयः—हे अम्ब! ढक्कापुरतन्तुवायनिर्मितम्, अतिमृदुलं, दीर्घदैर्ध्यपरिणाहं,

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

मुष्टिमेयम्, अतुलं विपुलम् अपि तत् अंशुकम् अद्य शाद्वले पातितं श्वः तुहिनाकुलं कः द्रक्ष्यति? (कः) नेष्यति?॥१५८॥

अर्थ—ढक्कापुर (सम्प्रति बंगलादेशस्थ ढाका नगर) के तन्तुवायों (वस्त्रनिर्माताओं-बुनकरों-जुलाहों) द्वारा निर्मित, अत्यन्त कोमल, लम्बे-चौड़े, मुट्ठी में समा जाने वाले किन्तु विपुल, उस अंशुक (ढाका का मलमल) को यदि आज हरी दूब के मैदान में बिछा दिया जाय तो, हे अम्ब! कल ओस (नीहार) से भीगे हुए उस वस्त्र को कौन देख पायेगा? अर्थात् कोई नहीं। (ओस से भीगने के बाद वह वस्त्र अत्यन्त सूक्ष्म (झीना) होने के कारण तद्रूप हो जाता है, अतः हरी-दूब के ऊपर बिछा होने पर भी दिखायी नहीं देता) उसे कौन ले जायेगा?॥१५८॥

छत्रचारुचन्द्रातपदीर्घव्यजनानि
सोपधानमासनञ्च रञ्जितवसनानि।
स्वर्णसूत्ररचितचित्रनिवहभूषितानि
काश्यामिह लभ्यन्ते नयनरञ्जितानि।।१५९।।

अन्वयः—इह काश्यां छत्रचारुचन्द्रातपदीर्धव्यजनानि, सोपधानम् आसनं च स्वर्णसूत्ररचितचित्रनिवहभूषितानि नयनरञ्जितानि रञ्जितवसनानि लभ्यन्ते॥१५९॥

अर्थ—यहाँ काशी नगरी में छत्रों के समान मनोहर एवं चाँदनी के समान विस्तृत व्यजन (बड़े-बड़े ताड़ के पंखे), मसनद, आसन (बिछाने के वस्त्र) एवं सोने के धागों से निर्मित चित्रों से भूषित रंगीन-वस्त्र (कढ़ायी से सुसज्जित बनारसी साड़ियाँ) आदि आखों को आनन्दित करने वालीं (अति सुन्दर दर्शनीय) वस्तुयें (यहाँ काशी में ही) मिलतीं हैं॥१५९॥

कुसुमपुञ्जमञ्जुकुञ्जकुञ्जरवरवाजिना-
मजविपिनानामपि कश्मीरनिवासिना।
राङ्कवमयनीशाराश्चित्रैरुपरञ्जिताः
को नेष्यति निःस्वास्तव नन्दनास्तु वञ्चिताः।।१६०।।

अन्वयः—कश्मीरनिवासिना (तन्तुवायेन निर्मिताः) कुसुमपुञ्जमञ्जुकुञ्ज-वरवाजिनाम्, अजविपिनानाम् अपि चित्रैः उपरञ्जिताः राङ्कवमयनीशाराः कः नेष्यति? तव नन्दनाः तु वञ्चिताः निःस्वाः (एव तिष्ठन्ति)॥१६०॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अर्थ—कश्मीर निवासी बुनकर द्वारा निर्मित पुष्पगुच्छों, सुन्दरकुञ्जों, उद्यानों, हाथियों, श्रेष्ठ घोड़ों के तथा बकरिय। एवं वनों के भी सुन्दर चित्रों से उपरञ्जित (अलंकृत), रङ्कु नामक मृग के कोमल रोमों से बनाये गये सूक्ष्म-सूत्रों द्वारा निर्मित नीशार (प्रावरण-ठंडी हवा से बचने के लिये ओढा जाने वाला वस्त्र, कश्मीरी पश्मीना शाल) न जाने कौन ठग ले जाता है? तुम्हारे पुत्र (कश्मीरी शाल बनाने वाले) तो आज भी निर्धन ही हैं।। (उस काल में देशी-विदेशी ठग-व्यापारी उन बहुमूल्य शालों को औने-पौने दामों में खरीद कर, बाहर मँहगे दानों में बेचते थे। बनाने वाले कश्मीरी जुलाहे पूर्ववत् दरिद्र ही रहते थे।।१६०।।

काव्योपसंहारारम्भः—

गोब्राह्मणरक्षणाय भगवानवततार
ध्रियते ते ध्रुवमनेन नियतं गुरुभारः।
प्रवेशस्य जलधिस्त्वयि विस्तृतमपि द्वारं
तमवलोक्य सर्वेषामबाधजलविहारम्।।१६१।।

अन्वयः—भगवान् गोब्रह्मणरक्षणाय अवततार। अनेन ते नियतं गुरुभारः ध्रुवं ध्रियते। त्वयि प्रवेशस्य जलधिः अति विस्तृतं द्वारम् (अस्ति), तम् अवलोक्य सर्वेषाम् अबाधजलविहारं (कर्त्तुमिच्छा जागर्ति)।।१६१।।

काव्य के उपसंहार का आरम्भ—

अर्थ—भगवान् श्रीकृष्ण ने गायों और ब्राह्मणों की रक्षा के लिये अवतार लिया था। उनके द्वारा निश्चित ही यह तुम्हारा (गो-ब्राह्मण-रक्षा का) गुरु-भार धारण किया गया है। यह समुद्र तुम्हारे ऊपर (भूतल पर) प्रवेश का विस्तृत द्वार है। उसे देख कर सब लोगों में अबाधरूप से जलविहार करने की इच्छा जागृत हो जाती है।।१६१।।

द्वारमिति द्वारकेति कुर्वन् किल नाम
नवनगरं निर्माय स कृष्णो निजधाम।
बहिःशत्रुशाल्वस्य ननु स कुर्वन् विध्वंस-
मुवास स दौवारिक इव सह यदुवंशः।।१६२।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अन्वयः—सः कृष्णः 'द्वारम्' इति (मत्वा) द्वारका इति नाम कुर्वन् किल नवनगरं निजधाम निर्माय, ननु सः बहिः शत्रुशाल्वस्य विध्वंसं कुर्वन्, सहयदुवंशः सः दौवारिकः इव उवास॥१६२॥

अर्थ—उन भगवान श्रीकृष्ण ने "यह भारतभूमि में प्रवेश का द्वार है" ऐसा मान कर 'द्वारका' नाम रखकर अपने रहने के लिये नया नगर बनवाया था। उन्होंने अपने शत्रु शाल्व का नगर के बाहर ही विध्वंस (विनाश) करके, वहाँ यदुवंशियों के साथ दौवारिक के समान (रक्षक बन कर) निवास किया था॥१६२॥

अन्तर्हितवति सति सति हरौ सिन्धुवेलां
सुदृढं किल रक्षितुमिव पताकादिखेलाम्।
निर्माय च नगरीं श्रीद्वारकेशमूर्त्तिं
संस्थाप्य च पशुपतिना सेतुबन्धपूर्त्तिम्॥१६३॥

संविधाय पुरुषोत्तममपि निधाय पुर्यां
कोणार्के नगरीमपि कुर्वन् स ससूर्याम्।
प्रससाद स राजनीतिविशारदो नृपतिः
प्रसन्नेन मनसा किल तत्तत् स्म स चिन्तति॥१६४॥

अन्वयः—हे सति! हरौ अन्तर्हितवति सति पताकादिखेलां सिन्धुवेलां किल रक्षितुम् इव (तत्र) नगरीं निर्माय, श्रीद्वारकेशमूर्त्तिं च संस्थाप्य, पशुपतिना (नृपतिना) सेतुबन्धपूर्तिम् संविधाय, पुर्यां पुरुषोत्तमम् अपि निधाय, सः कोणार्के ससूर्यां नगरीम् अपि कुर्वन्, सः राजनीतिविशारदः नृपतिः प्रससाद। प्रसन्नेन मनसा किल सः तत्तत् चिन्तति स्म॥१६३-१६४॥

अर्थ—हे सति! भगवान् श्रीकृष्ण के अन्तर्हित हो जाने के अनन्तर (भूलोक छोड़ कर गोलोक चले जाने के बाद) किसी (पशुपति-नामक) राजा ने सागरतट की रक्षा के लिये एक नगरी का निर्माण करके वहाँ पताकादि के साथ भगवान श्रीद्वारकेश (श्रीकृष्ण) मूर्ति को प्रतिष्ठापित किया। अथवा जैसे भगवान् पशुपति (शिव) द्वारा सेतुबन्ध की पूर्ति हुयी वैसे ही उस पुरी को पूर्ण करने के लिये वहाँ भगवान् पुरुषोत्तम को प्रतिष्ठापित करके तथा कोणार्क में

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

सूर्यमन्दिर सहित नगरी का निर्माण करके वह राजनीति का विशारद (पण्डित) राजा अत्यन्त प्रसन्न हुआ। वह राजा प्रसन्न मन से अनेक प्रकार के चिन्तन करने लगा॥१६३-१६४॥

यस्य कस्य राज्यमस्तु तेन नास्ति हानिः
देवमन्दिरमर्षणेन शतसहस्रपाणिः।
उत्थास्यति चैष्यन्ति च समवेता भारताः
पास्यन्ति च भारतं तु चेष्टितेन तावता।।१६५।।

अन्वयः–'यस्य कस्य (अपि) राज्यम् अस्तु' तेन कापि हानिः नास्ति, देवमन्दिरमर्षणेन शतसहस्रपाणिः च उत्थास्यति, समवेताः भारताः च एष्यन्ति, तावता चेष्टितेन तु भारतं पास्यन्ति च॥१६५॥

अर्थ–उसने विचार किया कि– जिस किसी का भी राज्य हो- उससे कोई हानि नहीं है। देवमन्दिरों की रक्षा के लिये लाखों हाथों वाले भगवान् स्वयं सन्नद्ध होंगे, तथा भारत के लोग समवेत (संघटित) होकर, अपनी चेष्टाओं (सत्कर्मों) से भारतवर्ष का रक्षण करेंगे॥१६५॥

न हि विदितं नरपतिना तेन धर्महीनाः
भविष्यन्ति तव तनयाः केवलं सुपीनाः।
तत्प्रमाणमस्ति जननि सिन्धोरिव तरङ्गः
यवनसैन्यमागमदिह सोमनाथभङ्गः।।१६६।।

अन्वयः–तेन नरपतिना हि न विदितं (यत्) तव तनयाः धर्महीनाः केवलं सुपीनाः भविष्यन्ति। हे जननि! तत्प्रमाणम् अस्ति (यत्) इह सिन्धोः तरङ्गः इव यवनसैन्यम् आगमत् (तेन) सोमनाथभङ्गः (च कृतः)॥१६६॥

अर्थ–हे देवि! वह राजा यह नहीं जान पाया कि- भविष्य में तुम्हारे पुत्र (भारतवासी) धर्महीन हो जायेंगे, वे केवल शरीर से ही सुपीन (मोटे-तगड़े) दिखायी देंगे, किन्तु ऐसा ही हुआ। हे जननि इसका प्रमाण है कि- समुद्र की तरङ्ग (सुनामी) के समान विनाशक यवनों की सेना यहाँ आयी और उसने सोमनाथ मन्दिर को तोड़ डाला॥१६६॥

काव्यत्वविमर्श–यवनसैन्य का सादृश्य सिन्धुतरङ्ग (सुनामी) से वर्णित है, अतः उपमा अलङ्कार है॥१६६॥

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

त्रिदशकोटिनन्दनैः सुवन्दिताभिनन्दिता
नन्दनवनमन्दारैरर्चिताऽस्यनिन्दिता ।
एतावति विभवे सति किं पुनर्नु खिद्यसे
भुवनेश्वरि! जगतामयि शिरसि धरणि! विद्यसे।।१६७।।

(मूलहस्तलिखिलप्रत्यन्ते काव्यसमाप्ति सूचकं किमपि कथनं लिखितं नास्ति, किन्तु अन्तिमे पदे विवक्षितस्य पूर्णता प्रतीयते, अतः काव्यान्तोऽत्रैव मन्तव्यः।)

अन्वयः—त्रिदशकोटिनन्दनैः सुवन्दिता अभिनन्दिता (असि तथा) नन्दनवनमन्दारैः अर्चिता (सती) अनिन्दिता असि! हे भुवनेश्वरि! एतावति विभवे सति पुनः किं नु खिद्यसे? अयि धरणि! जगतां शिरसि विद्यसे।।१६७।।

अर्थ—हे धरणि! तुम वर्तमान में (काव्य-प्रणयन काल में) अपने तैंतीस करोड़ पुत्रों (भारतवासियों) द्वारा सुवन्दित और अभिनन्दित हो, नन्दनवन के मन्दार पुष्पों से अर्चित हो तथा अनिन्दित हो। हे भुवनेश्वरि! इतना वैभव होने पर भी तुम क्यों खिन्न हो रही हो। अयि धरणि! तुम भारतवासियों के (समस्त भुवनों के) शिर पर विराजमान हो।।१६७।।

मूलहस्तलिखित प्रति में काव्य समाप्ति सूचक कुछ भी लिखा नहीं है, किन्तु अन्तिम पद्यार्थ से प्रतीत होता है कि कवि–विवक्षितार्थ की पूर्णता हो गयी है, अतः काव्य का अन्त यहीं मानना चाहिये।

आचार्य पं.श्रीताराचरणभट्टाचार्यकृत गीतिकाव्य भारतवसुन्धरासान्त्वनम् की डॉ. शिवराम शर्मा कृत गङ्गानामक हिन्दी व्याख्या पूर्ण हुयी।

।। श्रीरस्तु ।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

व्याख्याकृन्निवेदनम्–

कालिकानुकम्पयाप्तसकलमूलविद्यः
ताराचरणाभिधकविरभवदमलहृद्यः।
कविता कलिता च तेन राष्ट्रभक्तिनिर्भरा
सान्त्वनामनायि तया भारतवसुन्धरा।।१।।

तत्सुतेन विश्वनाथभट्टेन रक्षितम्
काले प्रकाशयितुं बहुधा समीक्षितम्।
काव्यं तन्मधुररुचिरललितभावपूरितम्
शिवरामशर्मणाद्य तु हिन्द्यामनूदितम्।।२।।

हरनारायणपिता यस्य माता सरस्वती
मध्यदेशजन्मभूश्च धान्येन धनवती।
सोऽयं शिवरामशर्म काश्यां निवसन् मुदा
प्रणमति गुरुचरणमद्य प्रीतेन सद्धृदा।।३।।

।। श्री हनुमते नमः ।।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

प्रो. विश्वनाथ भट्टाचार्य

प्रो. विश्वनाथ भट्टाचार्य की सम्पूर्ण शिक्षा-दीक्षा काशी में सम्पन्न [illegible]। अ[illegible]ने अपने पूज्य पिताजी साहित्यवाचस्पति पं० ताराचरण [illegible]ार्य [illegible] साहित्यशास्त्र का अध्ययन किया। डॉ. हरि सिंह गौर [illegible] सागर के संस्कृत विभाग में सन् १९५८ में प्राध्यापक [illegible] प्राप्त करने के उपरान्त सन् १९६९ में आपकी काशी [illegible]ालय में संस्कृत विभाग में रीडर पद पर नियुक्ति हुई। स[illegible] विभाग [illegible] सन् १९७९ से प्रोफेसर तथा ५ बार द्विवर्षीय [illegible]ध्यक्ष [illegible] के कार्यकाल को पूर्ण करते हुए आप १९९२ में सेवानि[illegible] [illegible] आप संस्कृत विभाग में सन् १९९५ तक सेवा विस्[illegible]क कार्यरत रहे।

[illegible] काव्यग्रंथ के संरक्षण तथा प्रकाशन का श्रेय आचार्य विश्वनाथ भट्टाचार्य तथा उनकी धर्मपत्नी पूजनीया माताजी श्रीमती मीरादेवी को विशेषकर जाता है। श्रीमती मीरादेवी जी ने इस काव्यग्रंथ की मूल पाण्डुलिपि विगत पॉच दशकों से भी अधिक समय तक सुरक्षित रखी जिसके फलस्वरूप आज इसका प्रकाशन [illegible] रहा है। इस काव्यग्रंथ की दो प्रतिलिपियां उपलब्ध है। दोनो ही कवि पं. ताराचरण भट्टाचार्य द्वारा अपने हस्तलेख से अंकित है।

आचार्य विश्वनाथ भट्टाचार्य को संस्कृत साहित्यशास्त्र के क्षेत्र में अमूल्य योगदान हेतु भारत शासन द्वारा संस्कृत के सर्वोच्च पुरस्कार सर्टिफिकेट आफ आनर - राष्ट्रपति पुरस्कार से सन् २०१६ में सम्मानित किया गया। इसके अतिरिक्त आपको अखिल भारतीय विद्वत् परिषद् द्वारा 'साहित्यवाचस्पति', श्री लालबहादुर शास्त्री राष्ट्रिय संस्कृत विद्यापीट, नई दिल्ली द्वारा 'वाचस्पति' की मानद उपाधि तथा वाकोवाक्यम् शोधसंस्थान, काशी द्वारा 'वाकोवाक्यम्' सम्मान से विभूषित किया गया है। साहित्यविवेक, संस्कृत ड्रामा एण्ड ड्रामाटर्जी, संस्कृतकाव्यसंग्रह, संस्कृतकाव्य-दीपिका, वैदिकसूक्तावली आदि ग्रंथों की रचना के साथ आपने आचार्य भोजराज के 'सरस्वतीकण्ठाभरणालङ्कार' ग्रंथ का रत्नेश्वर तथा जगद्धर की टीकाओं के साथ मूल सम्पादन, आचार्य मम्मट के काव्यप्रकाश का भी प्रदीप, उद्योत तथा प्रभा टीका के साथ मूलसम्पादन किया है। आपके संस्कृत, हिन्दी, बंगला तथा अंग्रेजी भाषा में लिखित ४५ से भी अधिक शोधपत्रों तथा कविताओं का संग्रह 'विचारबिन्दवः', ग्रंथ के अन्तर्गत सन् २०१७ में प्रकाशित हुआ है। भारतगीतिका नाम से पूर्व में प्रसिद्ध प्रस्तुत काव्यग्रंथ का आपके द्वारा भारतवसुन्धरासान्त्वनम् शीर्षक से मूल सम्पादन करते हुए प्रकाशन कराया जा रहा है। वाराणसी के जंगमबाड़ी क्षेत्र में स्थित पैतृक निवास-ताराचरण साहित्याचार्य स्मृति भवन को अपने बंग साहित्य समाज नामक साहित्य संस्था को समर्पित कर दिया है। इसमें अतिदुर्लभ बंगला ग्रंथों का विशाल पुस्तकालय है।

Digitization by Arya Samaj Charitable Foundation, Chennai

अनुवादक एवं व्याख्याकार

प्रो. शिवरामशर्मा

जन्मस्थानम् खुरई, सागरः, मध्यप्रदेशः

अध्ययनम् काशीहिन्दूविश्वविद्यालये, सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्वविद्यालये च

उपाधयः साहित्याचार्यः, विद्यावारिधिः।

पदप्रतिष्ठा अध्यापकः, श्रीरणवीरसंस्कृतविद्यालये १९८३तः २००६यावत् सहायकाचार्यः- सङ्गीतशास्त्रविभागे (का.हि.वि.वि.) २००६तः२०१७
आचार्यः - साहित्यविभागे (का.हि.वि.वि.) अगस्त२०१७तः।

कृतित्वम्
१. कविभट्टवामनविरचित 'शृङ्गारभूषणस्य' संस्कृतहिन्दीव्याख्या।
२. कविबटुकनाथशास्त्रीप्रणीत 'कल्लोलिनी' काव्यस्य हिन्दीव्याख्या।
३. पञ्चतन्त्रस्य संस्कतहिन्दीव्याख्या।
४. आचार्यशिवदत्तशर्मचतुर्वेदकृत 'कालिदासायनी' काव्यस्य समपादनम्।
५. काव्यतरङ्गिणीति स्वरचितकाव्यसंग्रहो यन्त्रस्थः।
६. मालविकाग्निमित्राद्यनेकनाटकानां सहनिर्देशनम्।
७. विभिन्नपत्रिकासु त्रिंशत्तोऽधिकशास्त्रीयनिबन्धप्रकाशनम् ।

अभिरुचिः काव्यशास्त्राध्ययनाध्यापनम्।

मूल्यम् रु. २००/- **सन् २०१७**

शारदा संस्कृत संस्थान
जगतगंज, वाराणसी-221 002
फोन : (0542) 2204168 (संस्थान) 2452037 (आवास)
e-mail: sharadabhawan@yahoo.co.in
website: www.sharadasansthan.in

ISBN 938199996-1
9789381999967